सफल दाम्पत्य जीवन के मौलिक सिद्धान्त



– श्रीराम शर्मा आचार्य

सफल दाम्पत्य जीवन के मौलिक सिद्धान्त

लेखक

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१२ मूल्य : १०.०० रुपये

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

सुखी दाम्पत्य का आधार है—पति-पत्नी का शुद्ध सात्विक प्रेम। जब दोनों एक-दूसरे के लिए अपनी स्वार्थ-भावना का परित्याग कर देते हैं तब हृदय परस्पर मिल जाते हैं। प्रेम में अहंकार का भाव नहीं होता है। त्याग ही त्याग चाहिए। जितने गहन तल से समर्पण की भावना होगी उतना ही प्रगाढ़ प्रेम होगा।

ISBN
81-89309-09-9

मुद्रक :

युग निर्माण योजना प्रेस,

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

परिवार का मूल : दाम्पत्य जीवन

दाम्पत्य जीवन के ऊपर पारिवारिक, सामाजिक, व्यक्तिगत सभी तरह की उन्नति और विकास निर्भर करते हैं। पति-पत्नी के सहयोग, एकता, परस्पर आत्मोत्सर्ग, त्याग-सेवा आदि से दाम्पत्य जीवन की सुखद और स्वर्गीय अनुभूति सहज ही की जा सकती है। इससे मनुष्य के आंतरिक और बाह्य जीवन के विकास में बड़ा योग मिलता है। सभी भाँति, स्वस्थ, संतुलन, सुन्दर दाम्पत्य जीवन स्वर्ग की सीढ़ी है और मानव विकास का प्रेरणा-स्रोत है।

जीवन लक्ष्य की लम्बी मंजिल को तय करने के लिए पति-पत्नी का अनन्य संयोग यात्रा को सहज और सुगम बना देता है। नारी शक्ति है तो पुरुष पौरुष। बिना पौरुष के शक्ति व्यर्थ ही धरी रह जाती है तो बिना शक्ति के पौरुष भी किसी काम नहीं आता। वह अपंग है। शक्ति और पौरुष का समान प्रवाह, संयोग, एकता नवसृजन के लिए, नव-निर्माण के लिए आवश्यक है। इनकी परस्पर असंगति, असमानता ही अवरोध, हानि, अवनति का कारण बन जाती है। पति-पत्नी में यदि परस्पर विग्रह, आपाधापी, स्वार्थरता, द्वेष, स्वेच्छाचार की आग सुलग जायेगी तो दाम्पत्य जीवन का सौन्दर्य, विकास, प्रगति महत्त्वपूर्ण संभावनाओं का स्वरूप अपने गर्भ में ही नष्ट हो जायेगा।

पति-पत्नी संसार-पथ पर चलने वाले जीवन-रथ के दो पहिये हैं, जिनमें एक की स्थिति पर दोनों की गति-प्रगति निर्भर करती है। दोनों का चुनाव जितना ठीक होगा उतना ही सुखद, स्वर्गीय, उन्नत और प्रगतिशील बनेगा। दोनों में से एक भी अयोग्य-कमजोर हो तो दाम्पत्य जीवन का रथ डगमगाने लगेगा और पता नहीं वह कहीं भी दुर्घटनाग्रस्त होकर नष्ट-भ्रष्ट हो

जाये अथवा मार्ग में ही अटक जाये। इससे न केवल पति-पत्नी वरन परिवार-समाज के जीवन में गतिरोध पैदा होगा, क्योंकि दाम्पत्य जीवन पर ही परिवार का भवन खड़ा होता है और परिवार से ही समाज बनता है, इसलिए पति-पत्नी का चुनाव एक महत्त्वपूर्ण पहलू है।

बड़ी-बड़ी आशा-आकांक्षाओं के साथ नवयुवक और नवयुवतियाँ दाम्पत्य जीवन के सूत्र में बँधते हैं। बड़ी-बड़ी रस्में अदा होती हैं, विवाह के रूप में बड़ा समारोह मनाया जाता है। गाजे-बाजे, रोशनी, दावतों, लेन-देन, बरात, जुलूस आदि के साथ दो प्राणी विवाह-सूत्र में बँधते हैं। परस्पर के नये आकर्षण से प्रारम्भिक दिनों दोनों का जीवन बड़ा सुखद दीखता है किन्तु यह स्थिति अधिक दिन तक नहीं रहती और दाम्पत्य-जीवन कलह, अशांति, द्वेष, असन्तोष की आग में जलने लगता है।

परिपाटी के तौर पर जो प्रतिज्ञाऐं धर्म पुरोहित उच्चारण कर देते हैं, उनका व्यावहारिक जीवन में नाम भी नहीं रहता। दाम्पत्य जीवन एक-दूसरे के लिए बोझा बन जाता है। इसका कोई बाह्य कारण नहीं अपितु पति-पत्नी दोनों के ही परस्पर व्यवहार-आचरणों में विकृति पैदा होने पर ही अक्सर ऐसा होता है। यदि इन छोटी-छोटी बातों में सुधार कर लिया जाये तो दाम्पत्य जीवन परस्पर सुख, शांति, आनन्द का केन्द्र बन जाये।

दाम्पत्य जीवन की सुख-समृद्धि एवं शांति के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि व्यवहार में एक-दूसरे की भावनाओं का ध्यान रक्खें। एक छोटा-सा सिद्धांत है कि "मनुष्य दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करे जैसा वह स्वयं के लिए चाहता है।" पति-पत्नी भी सदैव एक-दूसरे की भावनाओं-विश्वासों का ध्यान रखें, किन्तु देखा जाता है कि अधिकांश लोग अपनी भावना-विचारों में इतने खो जाते हैं कि दूसरे के विचारों का कुछ भी ध्यान नहीं रखा जाता, वे उन्हें निर्दयता के साथ कुचल भी देते हैं। इस तरह दोनों में एकता-सहयोग के स्थान पर असन्तोष का उदय हो जाता है। अपनी इच्छानुसार पत्नी को

जबरदस्ती किसी काम के लिए मजबूर करना, उसकी इच्छा न होते हुए भी दबाव डालना पति के प्रति पत्नी के मन में असन्तोष की आग पैदा करता है। इसी तरह कई स्त्रियाँ अपने पति के स्वभाव, रुचि, आदेशों का ध्यान न रखकर अपनी छोटी-छोटी बातों में ही उन्हें उलझाये रखना चाहती हैं। फलतः उन लोगों को विवाह एक बोझ-सा लगने लगता है। दाम्पत्य जीवन के प्रति घृणा-असंतोष होने लगता है और यही असंतोष उनके परस्पर के व्यवहार में प्रकट होकर दाम्पत्य जीवन को विषाक्त बना देता है। यदि किसी की मानसिक स्थिति ठीक न हो तो परस्पर लड़ाई-झगड़े होने लगते हैं और एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप करते रहते हैं।

पति-पत्नी का सदैव एक-दूसरे के भावों-विचारों एवं स्वतन्त्र अस्तित्व का ध्यान रखकर व्यवहार करना दाम्पत्य जीवन की सफलता के लिए आवश्यक है। इसी के अभाव में आजकल दाम्पत्य-जीवन एक अशांति का केन्द्र बन गया है। पति की इच्छा न होते हुए, साथ ही आर्थिक स्थिति भी उपयुक्त न होने पर स्त्रियों को बड़े-बड़े मूल्य की साड़ियाँ, सौन्दर्य प्रसाधन, सिनेमा आदि की माँग पतियों के लिए असन्तोष का कारण बन जाती हैं। इसी तरह पति का स्वेच्छाचार भी दाम्पत्य जीवन की अशांति के लिए कम जिम्मेदार नहीं है। यही कारण है कि कोई घर ऐसा नहीं दीखता, जहाँ स्त्री-पुरुषों में आपस में नाराजगी-असंतोष दिखाई न देता हो।

पति-पत्नी का एक समान संबंध है, जिसमें न कोई छोटा न कोई बड़ा है। जीवन यात्रा के पथ पर पति-पत्नी परस्पर अभिन्न हृदय साथियों की तरह होते हैं। दोनों का अपने-अपने स्थान पर समान महत्त्व है। पुरुष जीवन क्षेत्र में पुरुषार्थ और श्रम के सहारे प्रगति का हल चलाता है तो नारी उसमें नवजीवन, नवचेतना, नव-सृजन के बीज वपन करती है। पुरुष जीवन रथ का सारथी है तो नारी रथ की धुरी। पुरुष जीवन रथ में जूझता है तो नारी उसकी रसद व्यवस्था और

साधन-सुविधाओं की सुरक्षा रखती है। किन्तु अज्ञान और अभिमानवश पुरुष नारी के इस सम्मान का पालन नहीं करता। दाम्पत्य जीवन में विषवृद्धि का एक कारण परस्पर असम्मान और आदर भावनाओं का अभाव भी है।

गृहस्थ जीवन में जितने भी सुख हैं वे सब दाम्पत्य जीवन की सफलता में सन्निहित हैं। दाम्पत्य जीवन सुखी न हुआ तो अनेक तरह के वैभव होने पर भी मनुष्य सुखी, सन्तुष्ट तथा स्थिर चित्त न रह सकेगा। जिनके दाम्पत्य जीवन में किसी तरह का क्लेश, कटुता तथा संघर्ष नहीं होता वे लोग बल, उत्साह और साहसयुक्त बने रहते हैं। गरीबी में भी जीत का जीवन बिताने की दक्षता दाम्पत्य जीवन की सफलता पर निर्भर है, इसे प्राप्त किया ही जाना चाहिए।

वैवाहिक जीवन की असमता में आर्थिक, सामाजिक और संस्कारजन्य कारण भी होते हैं, किन्तु मुख्यतः मनोवैज्ञानिक व्यवहार की कमी के कारण ही दाम्पत्य जीवन असफल होता है। वस्तुओं का अभाव-परेशानियाँ जरूर पैदा कर सकता है, किन्तु यदि पति-पत्नी में पूर्ण प्रेम हो तो गृहस्थ जीवन में स्वर्गतुल्य सुखोपभोग इसी धरती पर प्राप्त किये जा सकते हैं। दुःख का कारण अनास्था और त्रुटिपूर्ण व्यवहार ही होता है, इसे सुधार लें तो दाम्पत्य जीवन शत-प्रतिशत सफल हो सकता है।

सुखी दाम्पत्य का आधार है—पति-पत्नी का शुद्ध सात्विक प्रेम। जब दोनों एक-दूसरे के लिए अपनी स्वार्थ भावना का परित्याग कर देते हैं, तब हृदय परस्पर मिले-जुले रहते हैं। प्रेम में अहंकार का भाव नहीं होता है। त्याग ही त्याग चाहिए विशुद्ध प्रेम के लिए। एक-दूसरे के लिए जितने गहन तल से समर्पण की भावना होगी उतना ही प्रगाढ़ प्रेम होगा। दाम्पत्य सुख प्राप्त करने के लिए प्रेम का प्रयोग करना चाहिए। यह प्रेम त्याग भावना, कर्त्तव्य भावना से ही हो। सौन्दर्य और वासना का प्रेम, प्रेम नहीं कहलाता, वह एक तरह का धोखा है। जो इस जंजाल में फँस जाते हैं, उनका दाम्पत्य जीवन बुरी तरह बेहाल हो

जाता है। प्रेम आत्मा से करते हैं शरीर से नहीं, कर्त्तव्य से करते हैं कामुकता से नहीं। प्रेम में किसी तरह का विकार नहीं होना चाहिए। शुद्ध, निर्मल और निश्चल प्रेम से ही पति-पत्नी एक सूत्र में बँधे रह सकेंगे—सुखी दाम्पत्य जीवन का यह प्रमुख आधार है।

इस सद्भावना का प्रमुख शत्रु है—अपना विषाक्त मन। मन बड़ा शंकालु होता है, वह बात-बात पर सन्देह प्रकट करता है। लिंग-भेद के कारण स्त्री-पुरुष में कुछ न कुछ छिपाव होता है। हलके स्वभाव के व्यक्ति इन बातों को अपनी कटुता का आधार बनाते हैं। तरह-तरह की कुत्सित कल्पनाओं से सन्देह के बीज बोते और वैमनस्य पैदा करते रहते हैं। स्त्री और पुरुष के बीच में एक विश्वास होना चाहिए। अविचलित विश्वास रहेगा तो दुर्भावनाएँ अपने आप ही दूर रहेंगी और दाम्पत्य जीवन का वातावरण विषाक्त होने से बच भी जायेगा।

निःस्वार्थ सेवा-भाव हमारे प्रेम-बन्धन को मजबूत बनाता है। सेवा मनुष्य का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। दाम्पत्य सुख की सुरक्षा में तो वह अपना विशिष्ट स्थान रखता है। सेवा का अर्थ जो यह लगाते हैं कि वह केवल सहधर्मिणी का ही कर्त्तव्य है, वे भूल में हैं। गृह-कार्यों का संचालन स्त्री की सेवा है और धन कमाना तथा उससे अपनी पत्नी की इच्छाएँ पूर्ण करने में पुरुष की सेवा मानी जाती है। इन कर्मों का पालन कर्त्तव्य-भावना से हो, दासियों की तरह स्त्रियों से अपनी शारीरिक सेवा लेना बज्रमूर्खता है। बीमारी या विवशता में तो ऐसा संभव है, किन्तु इसे प्रतिदिन का व्यापार बना लेना उन अविवेकियों का ही काम हो सकता है, जो दाम्पत्य जीवन को एक पवित्र आध्यात्मिक संबंध न मानकर केवल जड़ता की दृष्टि से देखते हैं। ऐसे ही कर्म करें तो फिर मनुष्य और पशुओं में अंतर ही क्या रहेगा ?

मनुष्य में से भावनाएँ निकाल दी जाएँ तो फिर जो शेष बचेगा वह इतना घृणास्पद होगा कि उसे स्पर्श-करना तो दूर कोई देखना भी पसन्द न करेगा। भाव-संवेदनाएँ ही हैं जो जीवन

को जोड़कर रखती हैं, मनुष्य मनुष्य के बीच मैत्री कायम रखती हैं, व्यवस्था बनाये रखती हैं। भावनाओं से रिक्त संसार और मरघट में कोई अंतर नहीं रह जाता। दूसरी ओर भावनाओं की शीतल छाया उपलब्ध हो तो लोग अभाव की स्थिति में भी आनंदपूर्वक जीवन जीते हैं। भावनाएँ न होतीं तो संसार बिखर गया होता, अब तक कभी का नष्ट-भ्रष्ट हो गया होता।

खेद है कि मनुष्य जीवन भौतिक आकर्षणों की भयंकर दौड़ में भाव-विहीन होता जा रहा है, जिससे साधन बढ़ने पर भी निराशा बढ़ रही है। बढ़ते हुए अपराध, तलाक, आत्महत्याएँ इस तथ्य के प्रमाण हैं कि मनुष्य का हृदय-रस सूखता जा रहा है। यदि इस ओर मनुष्य जाति ने स्वयं रचनात्मक दृष्टि न डाली तो एक दिन उसका विनाश ही हो सकता है।

यह मनुष्य के लिए लज्जा की बात है कि उस जैसा विचारशील प्राणी इन मानवीय गुणों से रिक्त होता जा रहा है जबकि सृष्टि के दूसरे अबोध प्राणियों की भाव-संवेदना यथावत् अक्षुण्य है। मनुष्य मर्यादाशील-विचारशील प्राणी होने का दम भरता है, पर टूटते हुए दाम्पत्य संबंध, नष्ट होती पारिवारिक शांति, उच्छृंङ्खल होती जा रही भावी पीढ़ियाँ और अराजकतापूर्ण सामाजिक संबंध यह बताते हैं कि हमारा जीवनक्रम अशुद्ध होता जा रहा है। हम चाहें तो अपने दूसरे भाइयों से सीखकर अपने कदम फिर पीछे लौटा सकते हैं।

'डिक-डिक' जाति का हिरन एक पत्नीव्रती होता है। वह सदैव जोड़े में रहता है। अपने जीवनकाल में वह कभी किसी अन्य हिरणी के साथ सहवास नहीं करता। शेर और हाथी के बारे में भी ऐसी ही बात होती है। जोड़ा बनाने से पूर्व तो वह पूर्ण सतर्कता बरतते हैं, किन्तु एक बार जोड़ा बना लेने के बाद वे तब तक इस मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करते जब तक कि नर या मादा में से किसी एक की मृत्यु न हो जाए। मृत्यु के बाद भी कई ऐसे होते हैं जो पुनर्विवाह की अपेक्षा विधुर जीवन

व्यतीत करते हैं, पर उस स्थिति में उनकी संवेदना नष्ट हो जाती है और प्रायः बहुत अधिक खूँखार हो जाते हैं। इस स्थिति में भी वे जब कभी अपनी मादा की याद में आँसू टपकाते दीखते हैं तो करुणा उभरे बिना नहीं रहती। तब पता चलता है कि जीवन का आनन्द भावनाओं में है पदार्थ में नहीं।

चिंपाजियों की भी पारिवारिक और दाम्पत्य निष्ठा मनुष्य के लिए एक उदाहरण है। यह अपना निवास पेड़ों पर बनाते हैं, जोड़ा बनाने के बाद चिंपाजी अपने दाम्पत्य जीवन को निष्ठापूर्वक निबाहते हैं और किसी अन्य मादा या नर की ओर वे कभी भी आकृष्ट नहीं होते। नर अपने समस्त परिवार की रक्षा करता है। जब वे वृक्ष पर बनाये विश्रामगृह में आराम करते हैं तो वह नीचे बैठकर उनकी पहरेदारी करता है, कर्त्तव्य भावना से ओतप्रोत चिंपाजी की तेजस्विता देखते ही बनती है। वस्तुतः अपनी जिम्मेदारियाँ भली प्रकार निभा ली जाएँ तो इससे बड़ी कोई अन्य साधना नहीं। **'योगः कर्मसु कौशलम्'** का महामन्त्र इसी तथ्य का बोध कराता है कि कर्त्तव्यों का पालन मनुष्य सम्पूर्ण निष्ठा के साथ करे।

जंगली बतखें भी पारिवारिक निष्ठा से ओत-प्रोत होती हैं। अपनी जाति के अतिरिक्त यह बतखों की लगभग ४० जातियों में से किसी से भी संबंध नहीं बनातीं। जापानी मैण्डेरिन इनके बहुत अधिक समीप होती हैं, किन्तु जीवशास्त्रियों के अनेक प्रयत्नों से भी उसने उससे मिलने से इन्कार कर दिया।

दाम्पत्य निष्ठा की तरह जीवों में नर-मादे का पारस्परिक प्यार भी भावपूर्ण होता है। जंगली भैंसे, हिरण, बारहसिंगे तथा साँभर भी अपनी मादा के सींगों में सींग रगड़कर अपनी प्रेम-भावना प्रदर्शित करते हैं। सिंह-सिंहनी को अपना पराक्रम दिखाकर आकर्षित करता है तो हाथी को अपनी सूँड़ उठाकर अपनी प्रेम भावना का परिचय देना पड़ता है। कुछ पक्षी तथा जीव-जन्तु सुरीले राग और आवाज से अपनी विरह-व्यथा व्यक्त करते और प्रणय याचना करते हैं। कुछ जीवों में नेत्रों से

अभिव्यक्ति कर अपने प्रेम का परिचय देने का प्रचलन होता है पर प्रेम की स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रत्येक जीव में होती है, अतएव इसे एक सनातन तत्त्व के रूप में उसकी पवित्रता बनाये रखने का प्रयास करना चाहिए। प्रेम प्रदर्शन की वस्तु नहीं, वह आत्मा का भूषण है। अतएव वह जागृत किसी के भी प्रति हो, पर प्रयास उसके सार्वभौमिक रूप की अनुभूति का ही हो तभी सार्थकता है।

अपने साम्राज्य में अन्य सजातीय की उपस्थिति बर्दाश्त न करने वाला उल्लू भी दाम्पत्य-निष्ठा का एक अनोखा उदाहरण है। एक बार जोड़ा बना लेने के बाद वे गृहस्थ-जीवन का निष्ठापूर्वक पालन करते हैं। मादा को ३० से ३५ दिन तक अण्डे सेने में लगते हैं, इस अवधि में नर अपनी मादा के लिए स्वयं भोजन जुटाता है और इसकी रक्षा करता है। उल्लू के बच्चे जब तक उड़ना और शिकार करना नहीं सीख जाते, जब तक वे प्रौढ़ नहीं हो जाते, उन्हें यह माता-पिता ही आश्रय देते और परवरिश करते हैं।

धनेश पक्षी को तो और भी अधिक कष्टपूर्ण साधना करनी पड़ती है। अण्डे सेने के लिए आवश्यक ताप तथा मादा की सुरक्षा के लिए वह जिस खोल में रहती है नर उसका मुँह बिलकुल बन्द कर देता है, उतना ही खुला रखता है जिससे चोंच भर बाहर निकल सके। बस इसी से नर अपनी मादा को खिलाता-पिलाता रहता है।

पत्नी के बाद सेवा के सबसे बड़े अधिकारी अपने बच्चे होते हैं। जिन्हें जन्म दिया है उन्हें अच्छी तरह स्नेह-वात्सल्य देकर पोषण प्रदान करना भी एक प्रकार की समाज सेवा ही है। इस कर्त्तव्य की उपेक्षा कहीं नहीं की जानी चाहिए, जबकि दूसरे जीव अपने दायित्व हँसी-खुशी निबाहते रहते हैं, तब मनुष्य ही इधर से मुँह मोड़े यह उचित नहीं।

मनुष्य और पशु दोनों में ही मातृत्व भावना समान रूप से पायी जाती है। हिरण, गाय, नीलगाय आमतौर पर सीधे जानवर होते हैं, किन्तु इनके बच्चों को किसी प्रकार का खतरा हो तो उनकी रक्षा के लिए यह कुछ हिंसक हो उठते हैं। बिल्ली के लिए एक कहावत है—वह अपने बच्चों को सात घर घुमाती है। जीवशास्त्रियों ने अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि उसे अपनी सन्तान की असुरक्षा का भय सताता रहता है इसलिए वह सुरक्षित स्थान की खोज करती रहती है। बच्चों को अपनी गोद में ही सुलाती है। कुतिया के बच्चों को कोई उठा ले जाये तो वह उदास होकर डोलती है। वह अपने बच्चों को किन्हीं सुरक्षित हाथों में देखती है तो उसे बहुत कृतज्ञ और कातर दृष्टि में देखती है मानो उसे अपनी निर्धनता और उन हाथों में बच्चे के उज्ज्वल भविष्य का ज्ञान हो।

सारस अपने अण्डे सुरक्षित पानी से घिरे हुए किसी नन्हें टापू पर उन दिनों देती है जब बाढ़ की कतई आशंका न हो। वहाँ भी यदि कभी कोई लड़के या जंगली जानवर पहुँच जाते हैं तो उन्हें लुहलुहान करके छोड़ते हैं। सारस कभी भी अपने अण्डों या बच्चों को अकेला नहीं छोड़ते। एक भोजन की तलाश में जाता है तो दूसरा उसके पास रहता है।

कौवे और सर्प जैसे क्रूर जीव भी अपने बच्चों के प्रति अत्यधिक भावनाशील होते हैं। कौवे के अण्डों या बच्चों से कोई छेड़ाखानी करे तो समूचा काक सम्प्रदाय उन पर टूट पड़ता है। सर्प अपने बच्चों को अपनी कुण्डली में रखता है उस अवस्था में उसके भोजन का प्रबन्ध नर करता है। इस प्रकार वे अपनी सन्तति-सहिष्णुता का परिचय देते हैं। छछूँदर गर्भ धारण के बाद से ही भावी शिशु के लिए खाद्य संग्रह प्रारम्भ कर देती है ताकि प्रसव के बाद जब तक बच्चे भली प्रकार चलने-फिरने न लगें तब तक वह उनकी पहरेदारी कर सके।

इस संबंध में सबसे अधिक सुचारु व्यवस्था हाथियों में होती है। वे न केवल बच्चे को अपितु समूचा कबीला गर्भिणी

हथिनी को एक घेरे में रखकर उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध करता है। यदि उस पर कोई आक्रमण करे तो हाथी इतने अधिक खूँखार हो उठते हैं कि सारे जंगल को उजाड़कर रख देते हैं।

हिन्द महासागर की कुछ मछलियाँ तो अपने अण्डों को जो हजारों की संख्या में एक छत्ते के आकार में होते हैं तब तक अपने ही साथ तैराती-घूमती हैं जब तक बच्चे न निकल आएँ और वे स्वयं चलने-फिरने न लगें। एरियस तथा तिलपिया मछलियाँ तो अण्डों को अपने मुख में सेती और उनके आत्म-निर्भर होने तक अपने बच्चों को मुख में छिपाकर उनकी रक्षा करती हैं। कुत्ते-बिल्ली जिस सावधानी से अपने बच्चों को मुख में दबाकर उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती हैं यह उससे भी अनूठा उदाहरण हैं। चूहों के दाँत बड़े तेज होते हैं किन्तु अपने बच्चों को उठाते समय उन्हें कहीं भी कतई कोई खरोंच तक नहीं आने देते, वे इस कोमलता से उन्हें उठाते हैं।

मछलियाँ पानी में रहने वाली जीव हैं, पर गौराई जाति की मछलियाँ एक विशेष् प्रकार की घास से अपना घोंसला बनातीं और उसमें बच्चे पालती हैं। यही नहीं चिड़ियों की तरह बड़े होने तक स्वयं ही खिलाती-पिलाती भी हैं। सील मछलियाँ अपने बच्चों की परिवरिश के लिए अपने शरीर में खुराक की प्रचुर मात्रा पहले ही एकत्र कर लेती हैं और उन्हें वे पाँच सप्ताह तक उसी बल पर किनारे पड़ी सेती रहती हैं, इस अवधि में वे पूर्ण उपवास करती हैं।

मादा गैंडा अपने बच्चों को सदैव अपनी आँखों के सामने ही रखती है। वह कभी दाँये-बाँये होना चाहें तो वह उसे धौल मारकर अनुशासन में रहने को विवश करती हैं। शूश भी अपने बच्चों का पालन करते समय उन्हें अनुशासन सिखाती है। वह जब चलती है तो अपने एक बच्चे को अपनी पूँछ पकड़ाकर अनुगमन करने की प्रेरणा देती है, शेष बच्चे क्रमशः एक-दूसरे की पूँछ पकड़कर पंक्तिबद्ध रेल के डिब्बे की तरह चलते हैं।

आरेजूटन और गिबन बन्दर तथा चिंपाजी पेट पर या पीठ पर लादे बच्चों को बड़े होने तक घुमाते हैं। कई बार बच्चे मर जाते हैं तो भी ये मातृत्व पीड़ावश कई-कई दिनों तक उनकी लाश को ही छाती से चिपकाये घूमते रहते हैं। ओपोसम बोमनेट के कंगारू की तरह की पेट में थैली होती है, ये बच्चों को उसी में रखकर पालते हैं और कहीं रुकने पर वे उन्हें बाहर निकालकर सिखाते-समझाते भी हैं, केवल लाड़वश पेट में लगाये रहें तो इसमें कर्त्तव्य-पालन कहाँ हुआ ? वे उन्हें शिकार करना, खेलना-कूदना भी सिखाते रहते हैं।

वेल्स द्वीप से एक बार नाम-क्रम आदि के निर्देश-पट पैरों में बाँधकर कुछ जल कपोतों को विमान से ले जाकर अन्य देशों में छोड़ दिया गया। इसमें एक कपोती भी जिसने हाल ही में दो बच्चों को प्रसव दिया था उसे ले जाकर बेसिन में छोड़ा गया, जबकि अन्य जल कपोत ५-६ माह पीछे लौटे, कपोती ६३० मील की दूरी १५ दिन में ही तय कर वापिस बच्चों के पास लौट आई। जिनके सन्तान नहीं थीं वे अटलांटिक और जिब्राल्टर होते हुए ३७०० मील की यात्रा आनन्दपूर्वक भ्रमण करते हुए लौटे। इससे यह पता चलता है कि कर्त्तव्य पालन की मूल प्रेरणा संवेदनाओं से प्रस्फुटित होती है। सच्चे और ईमानदार व्यक्ति की पहचान करनी हो तो उसकी संवेदना टटोलनी होगी। संवेदना का अर्थ ही है कि अपने छोटों के प्रति करुणा, दया और उदारता की भावनाएँ रखना उनके कष्ट-कठिनाई में सहायक होना।

शेर जैसे खूँखार जीव में मातृ-वात्सल्य सुलभ-प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सुरक्षा की दृष्टि से शेरनी को कई बार एक स्थान से दूसरी घाटी तक मीलों लम्बा स्थान बदलना पड़ता है तब शेरनी एक-एक बच्चे को गर्दन में बड़ी नरमी से पकड़कर दूसरे स्थान पर पहुँचाती है, यह कार्य वह प्रायः रात में करती है।

चुहिया जैसा तुच्छ प्राणी भी ममता से ओतप्रोत है। उसके दाँत अत्यधिक पैने होते हैं तो भी वह उन्हें उठाते समय इतनी भावुक होती है कि उन्हें खरोंच भी नहीं आती।

अन्य जीवों में इस तरह की संवेदना मिले और मनुष्य उससे शून्य रहे यह परमात्मा के अनुग्रह का अपमान है। हमें तो अपनी भावनाएँ परिवार-बच्चों तक ही सीमित न रखकर समस्त मानव जाति तक फैलानी और सबके कल्याण की बात सोचनी चाहिए, तभी मानव जीवन की सफलता और सार्थकता है। किन्तु जो लोग अपनी जीवनसंगिनी या जीवन-साथी के साथ ही प्रेमभरी कोमल भावनाएँ स्थाई नहीं रख पाते और उनका अहंकार आड़े आ जाता है, उन्हें तो इन भावनाशील जीवों से भी गया-गुजरा ही कहा जायेगा।

वस्तुतः दाम्पत्य जीवन में ऐसा छिछोरा अहंकार एवं मूढ़तापूर्ण दर्प सर्वथा अनुचित है। जहाँ पत्नी के प्रति ममता एवं निश्चल ममता का भाव नहीं है, वहाँ दाम्पत्य जीवन का सच्चा सुख कदापि नहीं मिल सकता। विषमता विक्षोभ को बढ़ाती है। अहं की प्रतिक्रिया अनिष्टकर होती है। जिसे अपना अहं प्रिय है उसे दाम्पत्य-जीवन अपनाने की क्या आवश्यकता है ? दाम्पत्य जीवन तो प्रेमपथ की यात्रा है, उसमें अहं का विलयन-विसर्जन ही अभीष्ट होता है। अहंकार और दाम्पत्य प्रेम साथ-साथ चल पाना सर्वथा असंभव है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रुचि एवं प्रवृत्ति के अनुसार दो में से किसी एक को ही चुन लेना चाहिए।

● ●

सफल दाम्पत्य के व्यावहारिक सत्य

अभी कुछ समय पूर्व एक पाश्चात्य कलाकार दम्पत्ति ने अपने विवाहित जीवन की २५वीं वर्षगाँठ मनाई। उन्होंने विवाहित जीवन के ये २५ वर्ष बड़े आनन्दमय वातावरण और शांति से व्यतीत किये हैं। उन्होंने अपने सुखी दाम्पत्य जीवन के निम्न १६ सूत्र बतलाये हैं। आशा है इनसे अन्य विवाहित दम्पत्ति लाभ उठायेंगे, साथ ही सुखी विवाहित दम्पत्ति भी इन्हें अपनाकर सुख में वृद्धि कर सकेंगे।

(१) अपने साथी को (पति पत्नी को, पत्नी पति को) सच्चे हृदय से प्यार करिये। प्यार का तात्पर्य है—साथी के दोषों और गलतियों को सहानुभूतिपूर्वक क्षमा करते रहना।

(२) यदि आपस में मतभेद या कोई गलतफहमी हो जाए तो जल्द से जल्द उसे दूर करने का प्रयत्न कीजिए। अहंभाव से सदा दूर रहने का प्रयत्न कीजिये। सरलता, मधुर भाषण और क्षमाशील स्वभाव से दाम्पत्य जीवन के सूखते हुए वृक्ष में भी सरसता आ सकती है।

(३) एक-दूसरे पर अविचल विश्वास रखिये। सन्देह को पनपाकर ही अनेक दाम्पत्य परिवार आज कष्ट भोग रहे हैं, इसलिए सन्देह के इस विषवृक्ष को पनपने ही न दीजिये।

(४) सब परिस्थितियों में एक-दूसरे का पूरा साथ दीजिए। कष्टों को साथ सहकर और सुखों के दिन भी साथ रहकर काटिये। आर्थिक-सामाजिक आदि सब कार्य साथ-साथ सम्पन्न कीजिये। बीमारी, पीड़ा, दुःखी, मानसिक स्थिति में एक-दूसरे को पूरा-पूरा साथ दीजिये।

(५) एक-दूसरे की निःस्वार्थ भाव से सेवा कीजिये। पति-पत्नी दो शरीर एक प्राण होना चाहिए। संकुचित स्वार्थ को

तिलांजलि देकर ही आप दाम्पत्य जीवन का सच्चा आनन्द लूट सकेंगे।

(६) यथासंभव एक-दूसरे की आलोचना से बचिये। कमजोरी और दोष किसमें नहीं है, सर्वगुण सम्पन्न कौन है ? यदि आप परिवार में सुख और शांति चाहते हैं तो दूसरों में दोष ढूँढ़ने की आदत ही त्याग दीजिये। दोष निकालते रहने से परस्पर कटुता की भावना पैदा होती है और विश्वास नष्ट होता है। अतः दोष-दर्शन से बचिये।

(७) स्वेच्छाचारी मत बनिये। दोनों हर काम एक राय से करिये। कोई काम अपने साथी से छिपाकर मत करिये।

(८) अधिकार और बड़प्पन की दुर्भावना को छोड़ दीजिये।

(९) सदा मुस्कराते रहिये। दाम्पत्य जीवन में मुस्कराना, हँसना और मनोरंजन भोजन से भी अधिक आवश्यक है।

(१०) "पहले आपका सुख, पीछे मेरा" यह भावना घर को स्वर्ग बना देगी। अपने सुख को सदा पीछे रखिये।

(११) किसी भी बात को सदा सीधे ढंग से समझाइये। साथी पर व्यंग मत कीजिये, न उसे डाँटिये और न उस पर झुँझलाइये।

(१२) आपस में शिष्टाचार बरतिये। पारिवारिक जीवन में अशिष्ट व्यवहार सर्वथा निन्दनीय एवं त्याज्य है।

(१३) अधिक कामुक मत बनिये। अधिकांश दाम्पत्य जीवन इसी कलंक से दुःखी हैं ?

(१४) परिवार के सदस्यों की टीका-टिप्पणी न करें।

(१५) सादा जीवन बिताइये। विलासिता की वस्तुओं से यथासंभव बचते रहिये। सादगी सबसे बढ़िया फैशन है।

(१६) घर में प्रवेश करते ही हम बाहरी झंझटों को बिल्कुल भूल जाएँ। घर में तो बाहरी झंझटों की चिन्ताओं से मुक्त होकर परस्पर प्रेम और आल्हाद का आनन्द लूटना चाहिए। इसलिए

अपनी व्यवसाय संबंधी अड़चनें और चिन्ताएँ अपने व्यवसाय के स्थानों पर छोड़कर घर की ओर प्रस्थान करना चाहिए।

इस प्रकार जो दम्पत्ति जीवन में इन १६ सूत्रों को उतारने का प्रयत्न करेगा वह अपने जीवन को अवश्य आनन्दमय बना लेगा।

पति-पत्नी का प्रेम बरसाती नाले के समान अल्पकालीन नहीं, सदा बहने वाली नदी की तरह स्थाई होता है। नदी जब पर्वतों से निकलती है तो क्षीणकाय तथा तीव्रगामिनी होती है। मार्ग की चट्टानों से टकराती हुई, शोर करती हुई बहती है। उसमें जल कम और प्रवाह अधिक होता है। विवाह के आरम्भिक दिनों में पति-पत्नी के प्रेम की यही स्थिति होती है, उसमें भावुकता का प्रवाह अधिक तथा विवेकशीलता का जल कम होता है। जो पति-पत्नी केवल भावुकता का प्रवाह भर होते हैं वे बरसाती नाले की तरह शीघ्र ही सूख जाते हैं। जहाँ विवेक का जल होता है, वे निरन्तर आगे बढ़ते हुए अपने कलेवर को बढ़ाते चलते हैं।

रूप-यौवन का आकर्षण अधिक दिनों तक पति-पत्नी को बाँधकर नहीं रख सकता। रूप की अपनी कोई मर्यादा नहीं है, यह मनुष्य के मन की उपज है। एक अफ्रीकी हब्शी के लिए काला रंग, मोटे होठ तथा चपटी नाक सुन्दरता की निशानी है। एक अमेरिका निवासी गोरे व्यक्ति के लिए यह सब कुछ कुरूपता का मान-दण्ड हो जाता है। चीनी छोटे पाँवों को सुन्दर मानते हैं। हमारे देश में काले कमर तक लहराते बाल सुन्दर माने जाते हैं तो इंग्लैंड में भूरे और छोटे-छोटे गर्दन तक लम्बे।

रूप स्थाई भी तो नहीं होता, आयु के साथ ढल जाता है और अस्वस्थ होने पर बिगड़ जाता है। जो रूप को देखते हैं वे उसके समाप्त होने पर कैसे अपने जीवन साथी को प्यार कर सकेंगे ?

रूप देखना ही है तो मानसिक सौन्दर्य में देखना चाहिए। सच्चा परिचय तो मानसिक ही होना चाहिए, यही प्रेम का आधार होता है। इसे बढ़ाया जा सकता है सद्विचारों से, सद्गुणों से तथा सत्कर्मों से। मानसिक सौन्दर्य को बढ़ाते रहने से व्यक्तित्व में निखार आता है, यह निखार परस्पर प्रीति बढ़ाने में पर्याप्त होता है।

यौनासक्ति भी दाम्पत्य प्रेम का आधार नहीं हो सकती। स्त्री पुरुष का शारीरिक अंतर मात्र आकर्षण का केन्द्र नहीं होता, शरीर के पीछे मन भी लगा होता है। पुरुष कठोर परिश्रमी, बुद्धि प्रधान होता है। स्त्री कोमल, सहनशील तथा भावना प्रधान होती है। यही अंतर स्थूल रूप से शरीर की आकृति में भी स्पष्ट होता है।

आजकल यह भ्रान्ति बुरी तरह फैल रही है कि पति-पत्नी के प्रेम को स्थाई रखने के लिए शारीरिक समानता का रूप-रंग, गठन आदि का समान होना आवश्यक है यह नितांत भ्रामक है। मिलन तो उनके गुणों का होना चाहिए। पति अपनी पत्नी से सहनशीलता तथा भावनाओं का अनुदान प्राप्त करता है। पत्नी अपने पति से शारीरिक श्रम तथा बुद्धिमत्ता का लाभ उठाती है। परस्पर एक-दूसरे के पूरक बनकर पूर्णत्व की प्राप्ति करना ही इस विभिन्नता का परिणाम है।

शारीरिक संसर्ग की अपनी मर्यादाएँ हैं, इन मर्यादाओं को तोड़ने पर स्वास्थ्य हानि तथा मानसिक दुर्बलता का शिकार होना पड़ता है। प्रकृति ने स्त्री-पुरुष के संसर्ग में जो अनूठे स्पर्श सुख का सृजन किया है उसके पीछे एक ही कारण है कि इससे आकर्षित होकर व्यक्ति सृष्टिक्रम को चालू रखे, सन्तानोत्पादन करे। इस सुख की अनुभूति भी मर्यादित रहने में ही होती है, इस रहस्य पर आवरण पड़ा रहता है तभी सुख है। शारीरिक संसर्ग से जितना बचा जाये तथा मानसिक अनुदान जितना अधिक ग्रहण किया जाये उतना ही पारस्परिक प्रेम बढ़ता है।

स्त्री-पुरुष का भेद प्रकृति ने जितना नहीं बनाया है उतना मनुष्यों ने उसे बना दिया है। जिस प्रकार दो पुरुष परस्पर सहयोगी, भाई, मित्र, परिजन आदि होते हैं उनमें परस्पर प्रेम होता है, यह प्रेम उच्चकोटि का भी हो सकता है। भाई, भाई के लिए सब कुछ त्याग सकता है। मित्र अपने मित्र के लिए प्राण विसर्जन करने से भी नहीं हिचकिचाता। महिलाओं में भी आपस में ऐसा प्रेम देखा जा सकता है, ऐसे उदाहरण भी देखने को मिलते हैं।

लिंग भेद की यह धारणा मिटा दी जाए तथा पति-पत्नी एक-दूसरे को अपने साथी-सहयोगी के रूप में स्वीकार करके आपस में वैसा ही प्रेम करें तो यह प्रेम की बेल जीवनभर बढ़ सकती है। शारीरिक भेद को भुलाकर किया गया वह प्रेम ही सच्चा दाम्पत्य प्रेम होता है।

सदियों से मन-मस्तिष्क में बैठी यह भावना नहीं मिट सके तो भी पत्नी को 'रमणी' स्वरूप में देखना हितकर नहीं होता। संबंधों में जितना शारीरिक लगाव कम होता है प्रेम उतना ही प्रगाढ़ होता है। माता-पुत्र, पिता-पुत्र, भाई-बहिन आदि का प्रेम शारीरिक लगावों से रहित होने के कारण पवित्र कहलाता है तथा चिरस्थाई होता है।

पत्नी भी दिनभर माता-भगिनी की तरह ही सेवा करती है, प्रेम करती है। पति भी दिनभर पिता की तरह जी तोड़ श्रम करता है, अच्छी-अच्छी वस्तुएँ जुटाता है। यह पवित्रता जितनी अधिक बनी रहेगी उतना ही दाम्पत्य जीवन चिरस्थायी तथा आह्लादकारी बना रहेगा। 'कामिनी' के रूप में पत्नी को महत्त्व देना पाशविक ही कहा जा सकता है। पाशविक प्रेम में स्थायित्व की आशा भी व्यर्थ होती है।

जीवन साथी का चुनाव स्वयं ने किया हो अथवा अभिभावकों ने उससे कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता। दाम्पत्य

जीवन की सफलता तथा परस्पर प्रेम का विकास करने का दायित्व दोनों पर होता है।

विवाह के पश्चात् दोनों के सुख-दुःख एक ही हो जाते हैं। हमारे देश में पुरुषों का काम उपार्जन तथा स्त्री का काम गृह संचालन माना जाता है। यह कार्य विभाजन शारीरिक-मानसिक समताओं को दृष्टिगत रखकर किया गया है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक दम्पत्ति इसका पालन करे, एक-दूसरे की सुख-सुविधा को ध्यान में रखते हुए इसमें परिवर्तन भी किया जा सकता है। इसमें एक-दूसरे का सहयोग भी रहना चाहिए, इस प्रकार का सहयोग प्रेम में वृद्धि करता है। पति यदि पत्नी के घर के कामों में हाथ बँटा दे तो उसे परम सुख मिलता है। इसी प्रकार पत्नी पति के व्यापार आदि में सहयोग परामर्श दे सकती है।

पति-पत्नी को एक-दूसरे का यथार्थ रूप लेकर चलना आवश्यक है। मनुष्य में गुण-दोष होने स्वाभाविक हैं। गुणों में एकदम वृद्धि तथा दोषों को एकदम मिटाना संभव नहीं, जैसा भी यथार्थ स्वरूप एक-दूसरे का है उसी के अनुरूप एक-दूसरे से आशा रखी जाये। पति यदि नारी की आदर्श प्रतिमा को अपने मन-मस्तिष्क में बिठाये रखे व अपनी पत्नी से वैसा ही व्यवहार चाहे, पत्नी भी पति के ऐसे ही आदर्श स्वरूप को लेकर चले और पति को उस कसौटी पर कसे तो दोनों के हाथ निराशा ही लगती है। प्रेम के स्थान पर कटुता आरम्भ होने लगती है, यथार्थ स्वरूप को सामने रखकर चलने से एक-दूसरे को आशा से अधिक ही स्नेह-सहयोग देते हैं तथा परस्पर प्रेम बढ़ता है।

कोई पक्ष यह नहीं चाहता कि वह अनुपयोगी सिद्ध हो। पति के हाव-भाव, क्रिया-कलाप तथा कथन द्वारा इस बात की पुष्टि होती रहे कि पत्नी उसके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है, उसकी आवश्यकता जैसी विवाह के समय थी वैसी ही आज भी है तो पत्नी की दृष्टि में उसका सम्मान बढ़ जाता है। यही पत्नी के व्यवहार से भी झलके कि उसे अपने पति वैसे ही

लगते हैं जैसे विवाह के समय लगते थे तो दाम्पत्य स्नेह के सूत्र और भी दृढ़ हो जाते हैं।

इस उपयोगिता को जताने के लिए प्रशंसा करना, प्रेम प्रदर्शन करना आवश्यक है। यह क्रिया जितनी बार दोहराई जायेगी परस्पर नवीनता तथा आकर्षण बना रहेगा। प्रशंसा करने में इस बात का ध्यान रहे कि प्रशंसा कार्यों की तथा गुणों की ही हो। शरीर तथा सौन्दर्य की प्रशंसा शारीरिक आकर्षण को जन्म देती है। सत्कार्यों तथा गुणों की प्रशंसा एक-दूसरे का सम्मान तो बढ़ाती ही है, साथ ही साथ उनकी और वृद्धि करने का उत्साह भी जगाती है।

मनुष्य से भूल होना अस्वाभाविक नहीं। भूल पति से भी होती है तथा पत्नी से भी, भूलों को सुधारना भी आवश्यक होता है। भूल सुधार का क्रम भी प्रशंसा की तरह ही चलता रहना आवश्यक है, किन्तु सुधार का यह क्रम इस प्रकार न हो कि एक-दूसरे के आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचे। भूल सुधारने-स्वीकारने के लिए वही पक्ष सामने आये जिसने भूल की हो तो सराहनीय ही कहा जायेगा। ऐसी स्थिति में दूसरा पक्ष उसके इस साहस की प्रशंसा करे तो उसके मन पर इसका अच्छा प्रभाव तो पड़ेगा साथ ही अपने जीवन साथी पर उसे गर्व भी हो जायेगा। भूल या गलती करने वाला उसे स्वतः स्वीकार न करे तो दूसरे को सहन कर लेना ही ठीक रहता है। यदि सह सकने योग्य न हो तो उसे अपनी भूल विनम्र शब्दों में बता दे जिससे कि उसे बुरा न लगे।

पति-पत्नी के स्वभाव तथा रुचि में भिन्नता हो सकती है। विवाहोपरान्त यह भिन्नता पूरी तरह मिटाना आवश्यक नहीं होता, एक-दूसरे को समझ लेना एक-दूसरे की रुचि तथा स्वभाव का सम्मान करने से उनके हृदय में परस्पर सम्मान बढ़ जाता है। ये असमानताएँ या तो स्वयं समाप्त हो जाती हैं या एक-दूसरे की आदत में आ जाती हैं।

पति-पत्नी कर्त्तव्य से तो बँधे ही होते हैं, भावनाएँ भी उन्हें बाँधती हैं। एक-दूसरे की भावनाओं को समझ लेना तथा उनका सम्मान करना दाम्पत्य रूपी भवन की नींव होती है। यह प्रवृत्ति दोनों के हृदयों में मधुरता की सरिता बहाती रहती है। जरा-से इंगित पर या बिना कुछ कहे अपने जीवन साथी की इच्छाओं को जान लेने तथा तद्नुरूप आचरण करने वाले दम्पत्ति एक दूसरे के सर्वस्व हो जाते हैं।

जो दम्पत्ति एक-दूसरे की भावनाओं को समझने में असमर्थ होते हैं उनका परस्पर स्नेह घटता जाता है और एक दिन ऐसा आता है कि वे एक-दूसरे को चाहते हुए भी प्रेम नहीं दे पाते। ये बातें साधारण-सी होती हैं किन्तु महत्त्वपूर्ण होती हैं। एक-दूसरे के लिए कोई उपहार लाने, सेवा करने आदि में जो समर्पण की भावना जुड़ी होती है उसको समझा न जाए, उसे प्रशंसा के जल से सींचा न जाए तो यह प्रेम-बेल सूखने लगती है।

पति-पत्नी का प्रेम एक सुन्दर-सुसज्जित प्रासाद होना चाहिए। प्रेम के इस पथ में खण्डहरों का कोई मूल्य नहीं होता, खण्डहरों में निराशा, दु:ख, शोक, क्लेश, उत्पीड़न आदि जैसे कीड़े-मकोड़े उल्लू व चमगादड़ निवास करते हैं। जीवनभर साथ निभाने तथा पुलकने, हँसने-खेलने, अपने पारिवारिक-सामाजिक दायित्वों को निभाते रहने वालों का प्रेम ही सुरम्य प्रासाद कहा जा सकता है, जिसमें स्नेह, सौजन्य, आशा, उत्साह, दया, प्रसन्नता, श्रीमेधा आदि सद्गुण निवास करते हैं। ऐसे सुरम्य प्रासाद मिलकर ही समाज रूपी सुन्दर नगर का निर्माण करते हैं, यह तभी हो सकेगा जबकि पति-पत्नी ऐसा विवेक अपनायेंगे।

प्राय: हर पति-पत्नी दाम्पत्य सूत्र में बँधने के पूर्व और विवाह के आरम्भिक काल में अपने दाम्पत्य जीवन की सुखद कल्पनाएँ और उसे सफल सार्थक करने का उल्लास-उमंग लेकर चलते हैं किन्तु देखने में आया है कि उसमें कुछ प्रतिशत लोगों को छोड़कर शेष के वे स्वप्न साकार नहीं हो पाते और उनकी वे उमंगें कुण्ठित हो जाती हैं। इसका कारण उन भावनाओं और

सपनों को सत्य करने की व्यावहारिकता से वे अनभिज्ञ थे। अतः चाहते हुए भी अपनी दाम्पत्य बगिया के पुष्पों को महका न सके और वे असमय ही मुरझा गये। व्यक्ति की यह असफलता उसके जीवन को, उसके हर क्रिया-कलाप को प्रभावित किये बिना नहीं रहती। तद्विषक कुछ व्यावहारिक सूत्र नीचे दिये जा रहे हैं—

जीवन-पथ के दो सहयात्री पति-पत्नी अपने दाम्पत्य जीवन में प्रविष्ट होने के पूर्व या प्रारम्भिक दौर में जो संकल्प लेकर चले थे, परस्पर जो अनुराग लेकर चले थे, उनके आगे के जीवन के कड़वे-मीठे अनुभवों के मध्य उन पर गर्द जमती जाती है। अतः उन्हें समय-समय पर दोहराने-नवीनीकृत करने के प्रयास पारस्परिक प्रेम प्रदर्शन जिसमें दैहिक कामनाएँ जुड़ी न हों प्रदर्शित करना बहुत आवश्यक और उपयोगी रहता है। विवाह के समय लिए गये संकल्पों को विवाह दिवसोत्सव (शादी की वर्षगाँठ) के रूप में विवाह की विधि से ही मनाकर जिस प्रकार रेडियो लाइसेंस नवीनीकृत करते हैं, प्रतिवर्ष विवाह के संकल्पों का भी नवीनीकरण करना अच्छा और उपयोगी रहता है।

बीच-बीच में और संभव हो सके तो प्रतिदिन प्रेम प्रदर्शन के लिए पारस्परिक सेवा का उपक्रम चलाया जाना भी बहुत उपयोगी है। पत्नियाँ तो प्रायः प्रतिदिन भोजन बनाने, कपड़े धोने व अन्य सेवा कार्यों द्वारा पति के प्रति अपने सहज अनुराग को सहज प्रदर्शित करती रहती हैं। किन्तु पति प्रायः बाहरी काम को महत्त्व देने और पत्नी के इन कार्यों को केवल उसका दायित्व समझकर उसके साथ जुड़ी भावनाओं तक पहुँच नहीं पाते हैं, जबकि पत्नी चाहती है कि उसके इस अनुराग को समझा जाए। उसकी प्रशंसा अथवा छोटी-मोटी सेवा कोई आर्थिक सामर्थ्य के दायरे में रहकर दिये प्रेमोपहार के रूप में प्रकट होती रहनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो इस प्रकार पीतल के सुन्दर लोटे को प्रतिदिन नहीं माँजने पर वह काला पड़कर मैलग्रस्त और भद्दा हो जाता है, ऐसे ही पति-पत्नी के प्रेम में भी ऐसी ही शुष्कता आती जाती है। जो यों तो अभिव्यक्त नहीं होती, पर

कभी अवसर पाकर आत्मा पर चढ़ने वाले कषाय-कल्मषों को धोने के लिए प्रतिदिन उपासना की जाती है वैसे ही पति-पत्नी को अपनी दाम्पत्य सरसता मन्दाकिनी को सतत् प्रवाहमान् रखने के लिए किसी न किसी प्रकार अनुराग प्रदर्शन का और उसके प्रति उत्तर देने का क्रम चलाते रहना चाहिए।

प्रायः यह देखा जाता है कि सन्तान के आने के पूर्व तक पति-पत्नी में काफी सरसता बनी रहती है। दोनों एक-दूसरे का बहुत ध्यान रखते हैं। सन्तान हो जाने पर दोनों का स्नेह थोड़ा-थोड़ा उनकी ओर बँट जाता है। उसकी ओर स्नेह बँट जाना अस्वाभाविक भी नहीं है किन्तु ऐसा भी होता है कि उनके आने से पहले उन्होंने जो एक-दूसरे के साथ एकांतिक संगति भोगी थी उसकी आदत उसके उतने न सही थोड़े अंश में ही सही परितृप्ति चाहती है, जबकि पति-पत्नी उपार्जन गृहस्थी में फँसकर उस तरफ ध्यान नहीं दे पाते। किन्तु वह पहले वाली मानसिक भूख तो परितृप्ति चाहती ही है भले ही पेट की भूख की तरह उस भूख की प्रतीति न हो। दिनभर में थोड़ा-सा ही समय सही, पर वह पति-पत्नी का अपना हो, जिसमें किसी दूसरे का हिस्सा न हो। यहाँ यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि यह प्रेम प्रदर्शन दैहिक कम मानसिक अधिक हो।

यह सत्य सिद्ध है कि दाम्पत्य माधुर्य में दैहिक संसर्ग प्रायः विरक्ति पैदा करता है और मानसिक संसर्ग अनुरक्ति। दो मित्रों के बीच बिना किसी दैहिक आकर्षण से उत्कृष्ट प्रेम रह सकता है जबकि यहाँ माता-पिता, भाई-बहिन जैसा कोई प्राकृतिक रिश्ता नहीं होता। फिर भी यदाकदा एक मित्र दूसरे के लिए जान तक न्यौछावर करने को तत्पर हो जाता है। यह मानसिक अनुरक्ति का ही परिणाम होता है। पति-पत्नी के बीच भी यह मानसिक परिचय, मानसिक अनुरक्ति जो दिव्यता और स्थायित्व उत्पन्न करती है वैसा शारीरिक संसर्ग कदापि नहीं। वस्तुतः शारीरिक सम्मिलन के पीछे प्रायः मूल भाव अपने अनुराग का प्रदर्शन ही होता है। यदि इस ओर पति-पत्नी प्रवृत्त हुए तो

उनमें शक्तियों के क्षरण के साथ-साथ और भी कई समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं।

मनोरंजन का भी दाम्पत्य संबंधों को सफल बनाने में व्यावहारिक महत्त्व है। पत्नी प्रायः घर में ही रहती है, इससे उसके जीवन में एकरसता आ जाती है। यह एकरसता स्वास्थ्य व व्यवहार पर प्रभाव डालती है, वह कुछ उदासीन-सी रहने लगती है और पति उसके व्यवहार में अंतर पाता है तो उसे अपनी उपेक्षा समझ बैठता है। अतः दूसरे-तीसरे दिन या सप्ताह में कोई-कोई छोटा-सा, कम खर्च का मनोरंजन कार्यक्रम बनाकर उसे क्रियान्वित करते रहना चाहिए। जिनके पास समय और सुविधा है, वे रोज थोड़ी देर के लिए बच्चों सहित टहलने जाया करें तो यह व्यायाम और मनोरंजन दोनों आवश्यकताओं की पूर्ति कर देता है। घर में रेडियो आदि मनोरंजन के साधन हों तो अच्छा रहता है किन्तु दिनभर फिल्मी गाने सुनने या आये दिन सिनेमा देखने के मनोरंजन से प्रायः बचना ही ठीक रहता है।

कामवासना पति-पत्नी के पारिवारिक प्रेम का आधार कदापि नहीं हो सकती, किन्तु यह बिल्कुल अनावश्यक भी नहीं है। सन्तानोत्पादन के लिए और जहाँ शरीर, मन और आत्मा के संयोग के सुख का रसास्वादन मिले वहाँ उसका औचित्य भी है किन्तु इसे पेट की भूख की तरह मान लेने की बात जो तथाकथित आधुनिक लोग कहते हैं, मानते हैं—वह नितान्त अव्यवहारिक है। विवाह मनुष्य की कामवृत्ति की परितृप्ति के लिए ही नहीं उसके संयम व उसे ऊर्ध्वमुखी बनाने के लिए होता है। जो दम्पत्ति इस सत्य को समझने में भूल करते हैं, उनका प्रेम शारीरिक आवेगों से बरसाती नाले की तरह थोड़े ही दिनों तक किनारा तोड़कर बढ़ने के बाद सूख जाता है, अतः इससे बचना ही श्रेयस्कर है। एक-दूसरे की सेवा करते हुए पिता, भाई, पुत्र या मित्र की तरह दिया गया स्नेह श्रद्धा व प्रेम पति देता रहे तो यह कामना का शोधन बहुत ही व्यावहारिक है। पत्नी भी पति के लिए हर घड़ी केवल स्त्री नहीं रहती, वह प्रायः माँ,

बहिन, पुत्री, मित्र व सखा की भूमिका भी निभाती है। यही स्नेह को कामना के विष से मुक्त करने का राजमार्ग हैं।

जीवन पथ के दो सहयात्री पति-पत्नी के मन में यह उत्कृष्ट कामना होती है कि उसके सहयोग से उसका साथी प्रगति करता हुआ आसमान को छू ले। इसके लिए वे अभीष्ट त्याग, बलिदान, सहयोग, मार्गदर्शन देने के लिए भी पूरी तरह तैयार रहते हैं। किन्तु यहाँ एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि इस जोश के साथ होश भी रखना जरूरी है क्योंकि व्यक्ति की अपनी-अपनी सामर्थ्य और अपना-अपना स्तर होता है, यदि उस सामर्थ्य और उस स्तर को ध्यान में रखते हुए विकास के चरण स्थिर नहीं किये गये और उस पर बढ़ते हुए साथी की मन्द गति के साथ अपना धैर्य न जोड़ा गया तो प्रायः परिणाम उसे निरा अयोग्य मान लेने के रूप में सामने आता है, यह बड़ी भयंकर स्थिति होती है। अतः एक-दूसरे को आगे बढ़ाने की भावना के साथ-साथ इस व्यावहारिक पहलू को भूल नहीं जाना चाहिए।

कृपणता किसी भी क्षेत्र में हो बुरी ही सिद्ध होती है। धन की कृपणता की तरह पति-पत्नी की एक-दूसरे को अपने तक ही सीमित रखने की कृपणता भी कम हानिकारक नहीं होती। पत्नी मात्र पत्नी ही नहीं होती और पति मात्र पति नहीं होता। वे किसी के भाई, बहिन, मित्र, संबंधी, पुत्र, सखा, परिजन आदि भी तो होते हैं। जहाँ एक व्यक्ति अपने साथ जुड़े इन लोगों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करता है, वहाँ दूसरे के मन में ईर्ष्या या उन संबंधियों के प्रति द्वेष उत्पन्न होता है तो उसकी यह संकीर्ण सहृदयता उनको एक-दूसरे की नजरों में गिराती भी है। इसलिए यह भी आवश्यक है कि पति-पत्नी एक-दूसरे के माता-पिता, भाई-बहिन, सखा-मित्र आदि का यथोचित आदर-सम्मान भी करें, इससे दूसरे पक्ष की निगाह में उनका सम्मान बढ़ता है।

पति-पत्नी के संबंधों का मुख्य आधार प्रेम होता है। वे एक दूसरे के पति-पत्नी ही नहीं प्रेमी-प्रेमिका भी होते हैं। आजकल

कुछ लोग पश्चिमी सभ्यता की देखा-देखी पत्नी और प्रेमिका दो पृथक-पृथक नारियों को मानने लगे हैं, यह दाम्पत्य संबंधों के लिए बहुत घातक है। वस्तुतः ऐसा नहीं होता। पत्नी पति के सुख में प्रसन्न और उसके दुःख में दुःखी होती है उसे अपने पति के प्रेम और व्यक्तित्व पर गर्व होता है। यदि वह प्रेमिका जैसा भाव पत्नी के अन्दर से मर जाये और वहाँ केवल परिवार और सन्तान के कारण दोनों को एक छत के नीचे रहने की विवशता भर रह जाए तो वहाँ पत्नीत्व भी कहाँ जी पाता है। पति-पत्नी के बीच जो प्रेम होता है वह उसके लिए आसमान के तारे तोड़कर प्रेमिका के कदमों पर निछावर कर देने जैसी काल्पनिक उड़ान नहीं होता, उसमें सागर-सी गहराई होती है, यह गहराई और प्रौढ़ता आवश्यक भी है।

दिनभर का थका-हारा जीवन संग्राम का सिपाही पति घर लौटकर पत्नी के मन-प्राणों की शीतल छाँह में विश्राम पाकर नूतन बल पाता है, पत्नी उसे नया उत्साह देकर स्वयं को धन्य मानती है। यह प्रेम का वह रूप है जो दाम्पत्य के संबंधों में निखरता है, प्रौढ़ होता है। इसे पनपाने-बढ़ाने के लिए किसी से कुछ अपेक्षा करने की बजाय देने की ही भावना रखी जाए तो यह दान-प्रतिदान का क्रम चलता ही रहता है और वृद्धावस्था तक बना रहता है। यही वह समय है जब साथी की सबसे अधिक आवश्यकता होती है, किन्तु प्रायः इस अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते पति-पत्नी एक-दूसरे से बहुत कट जाते हैं। इसका कारण उस प्रेम बल्लरि को यत्नपूर्वक नहीं सींच पाना ही होता है।

प्रायः होता यह है कि युवावस्था को प्राप्त होने तक युवक-युवतियों ने जीवन साथी के भाव से किसी को पाया नहीं होता है। अतः विवाह के प्रारम्भिक दिनों में उनका पारस्परिक प्रेम आकर्षण, आसक्ति लम्बे उपवास के बाद मिलने वाले भोजन की तरह होता है और वे दाम्पत्य संबंधों के प्रारम्भ में ही एक-दूसरे को पूरी तरह पा लेना चाहते हैं। असंयमी की तरह

इस काल में न तन का संयम रखना उन्हें आवश्यक लगता है न मन का, किन्तु संयम बहुत ही आवश्यक होता है नहीं तो लम्बे उपवास के बाद एकदम भरपेट भोजन कर लेने की तरह ही असंयम हानिकारक बन जाता है। एक तरह से यदि अपने परिवार और संबंधियों की ओर से कटकर एक-दूसरे में ही डूब जाने की भूल यदि अनजाने में ही होती है तो वह उन दोनों को स्वार्थी व बेशर्म सिद्ध करती है जो उचित नहीं। दाम्पत्य सूत्र में बँधने का अर्थ परिवार से कटकर रह जाना नहीं है वरन् उन दायित्वों को और भी गहराई से लेना है। रहस्य पर आवरण पड़ा रहे, प्राप्य-प्राप्य ही बना रहे तभी तक मिलन का रस, आनन्द, मधुरता बनी रहती है। इस प्रेम रस को घूँट-घूँट करके पीया जाये तो वह अधिक तृप्ति व पुष्टि देगा। पूरा घूँट एकदम उड़ेल देने पर, छोटा मुँह सारा रस ग्रहण भी नहीं कर पाता वह व्यर्थ ही बह जाता है, तृप्ति भी नहीं होती और घट भी रीत जाता है।

दाम्पत्य जीवन में प्रवेश करते समय पति-पत्नी के मन में अपने इस जीवन की सफलता-सार्थकता के कई मीठे सपने होते हैं। वे उस समये किये गये संकल्पों को समय-समय पर दोहराते रहने, दैहिक-संसर्ग की अपेक्षा मानसिक परिचय को महत्त्व देने, मनोरंजन, काम, संयम, धैर्य, अकार्पण्य, प्रेम प्रवाह की अविकलता, प्रारम्भिक दिनों का संयम बरतते रहने आदि की व्यावहारिक सच्चाइयों को पालते रहने से साकार हो पाते हैं।

वैवाहिक जीवन में प्रायः पति-पत्नी को एक-दूसरे से जो स्नेह, संरक्षण, सहयोग, मार्गदर्शन, प्रेम, प्रतिदान मिल रहा है उसे वे देखने का प्रयास नहीं करते और अपने साथी से और कोई अपेक्षाएँ करने लगते हैं। इस कारण धीरे-धीरे उनके जीवन में असन्तोष व विरक्ति का मन्दविष घुलने लगता है। उनका जीवन रोते-कलपते व लड़ते-झगड़ते बीतता है। आरम्भ से ही यह दृष्टिकोण लेकर चला जाए कि 'हमारे साथी से जो कुछ मिल रहा है वह भी नहीं मिलता तो हमारी क्या दशा होती' तो उनके

एक-दूसरे से असन्तुष्ट होने की स्थिति भी उत्पन्न नहीं हो। साथ रहकर एक-दूसरे को अपने अनुकूल ढालने का प्रयास तो किया जाता रहे, पर धैर्य का साथ भी न छोड़ा जाए।

मनुष्य का स्वभाव भूल और गलतियाँ करने का होता है। बड़ों-बड़ों से बड़ी-बड़ी गलतियाँ और भूलें हुई हैं, यह दाम्पत्य जीवन के दौरान भी होती हैं। उसे लेकर बात का बतंगड़ बनाने की अपेक्षा उन भूलों को, गलतियों को सहज मानवीय कमजोरी के रूप में माना जाता रहे तो एक-दूसरे को छोटा समझने और उसके प्रति प्रेम में कमी आने की बात ही उत्पन्न नहीं होती। अपने जीवन साथी के समग्र व्यक्तित्व से प्यार करने वाले दम्पत्ति सदा एक-दूसरे से सन्तुष्ट रहते हैं। साथी के गुण व दोषों को स्वाभाविक मानकर चला जाए और साथ ही दोषों के परिमार्जन गुणों के अभिवर्धन और व्यक्तित्व के विकास की ओर ध्यान दिया जाता रहे तो उनमें गहरी समझ और प्रगाढ़ एक्य उत्पन्न होकर बढ़ने लगता है जो दाम्पत्य जीवन की सफलता के लिए एक आवश्यक तथ्य है।

'मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना' की सच्चाई से पति-पत्नी भी पृथक रह नहीं सकते। दोनों में वैचारिक दृष्टिकोण, मान्यता और सोचने का ढंग एक-सा ही हो—ऐसा संयोग बहुत कम देखने को आता है। यह भिन्नता समय-समय पर एक ही तथ्य पर दोनों को दो पक्षों पर ला खड़ा करती है। ऐसी दशा में यदि एक ने ही या दोनों ने अपनी बात पर अड़ने की हठधर्मी दिखाने की भूल की तो बात बिगड़ती चली जायेगी। अपना ही पक्ष रखा जाए और वही माना जाए और वही सत्य है, यह आग्रह उसके साथ न जोड़ा जाए। साथ ही जब कोई अपने विचारों, मान्यताओं व दृष्टिकोणों में वास्तव में कोई न्यूनता लगे तो वह साथी के सामने स्वीकार ले। दूसरा पक्ष उसे अपना बड़प्पन या समझदारी न समझे, अपने साथी के सुलझेपन को महत्ता दे। यह रीति-नीति पारस्परिक समझ को विकसित करने के लिए बड़ी उपयोगी है।

यह वैभिन्य अपनी-अपनी पसन्द में भी होता है। यहाँ एक-दूसरे की पसन्द की इज्जत करना, स्वीकारना और पूरी करना आवश्यक है न कि उस पर मुँह बिचकाना और अपसन्द ही थोपना। पति को करेले की सब्जी अच्छी लगती है, चटक तोतई रंग पसन्द है या बात-बात में ही हँसी मजाक करना अच्छा लगता है, पर पत्नी की पसन्द उससे भिन्न है फिर भी पति की उन पसन्दों का ध्यान तो वह रख ही सकती है। यही बात पति पर भी लागू होती है। ऐसा न करने से एक-दूसरे के प्रति—'देखो यह मेरा कितना ध्यान रखते हैं' का भाव उत्पन्न होता है, जो साथी की उपयोगिता को सिद्ध करता है जो पारस्परिक प्रेम बढ़ाने का एक आधार है।

गुण, कर्म, स्वभाव में भी प्रत्येक व्यक्ति एक-सा नहीं होता। पति-पत्नी में भी यह अंतर रहता ही है और यदि उस भिन्नता को ही महत्त्व देकर बात-बात पर अड़ा, खीझा और खिन्न हुआ जाता रहे तो परस्पर प्रीति कभी ठहर नहीं सकती। यह भिन्नता ही प्रायः दोनों को एक-दूसरे से विरक्त व असन्तुष्ट होने का कारण बनती है। इस संबंध में दोनों को बहुत सावधान रहना चाहिए। गुण, कर्म, स्वभाव उनके अब तक के जिये हुए जीवन पर ही नहीं पूर्वजन्म के संस्कारों द्वारा भी सिरजे होते हैं, अतः एकदम बदले नहीं जा सकते। परिष्कार का प्रयास तो किया जाता रहे, पर उन्हें लेकर दाम्पत्य सौमनस्य को, माधुर्य को नष्ट नहीं करना चाहिए। प्रायः पति-पत्नी यही भूल करते हैं एक-दूसरे को एकदम अपने अनुरूप बना लेने की, किन्तु यह इतना शीघ्र संभव नहीं होता।

भावनाएँ होना तो बहुत ही उत्तम हैं। भावनाएँ मनुष्य को सामान्य मानव से महामानव बनने की प्रेरणा प्रदान करती रहती हैं। वे दाम्पत्य जीवन में भी एक-दूसरे के प्रति देखी जाती हैं और उनका होना बहुत जरूरी भी है किन्तु अति भावुकता से बचा ही जाना चाहिए। अति भावुकता मनुष्य के क्रिया-कलापों व अनुरक्ति को हवा में उड़ने वाले बादल की तरह अस्थिर और

क्षणिक स्थाई बना देती है। अतः इस अति से सावधान-सचेत रहना आवश्यक होता है। पति-पत्नी को आसमान में उड़ना नहीं, धरती पर रहना चाहिए। आसमान की बातें तो सोची जा सकती हैं, सोची जानी चाहिए पर पाँव धरती पर टिके होने चाहिए जिससे कि उनके स्वप्न दिवास्वप्न न बनकर रह जाएँ। भावनाओं का जो प्रबल प्रवाह दोनों के हृदय में बहता है, उसे दिशा देने, उस प्रवाहमान जलराशि को सहारा देने के लिए धैर्य व निष्ठा के दो कूलों की भी आवश्यकता है। अति भावुकता उन्हें तोड़ देती है फिर उस नदी के प्रवाह का कोई नामोनिशान नहीं रहता।

ऐसा ही नियमन पारस्परिक आसक्ति का भी होना आवश्यक है। आरम्भ में पति-पत्नी के बीच काम करने वाला सूत्र प्रायः 'आसक्ति' होता है जो समय के साथ प्रौढ़, पुष्ट व कल्याणकारी बनता जाता है और 'प्रेम' में परिवर्तित होता है। इस आसक्ति का नियमन यदि न हो सका और वह मात्र दैहिक बनकर रह गयी तो बड़ा संकट उपस्थित हो जाता है। इसके नियमन के लिए उसे सेवापरक बनाना उपयुक्त रहता है। यही कारण है कि नारी में सेवा की प्रवृत्ति होने के कारण वह प्रायः दैहिक कामना में पुरुष की अपेक्षा बहुत पीछे रहती है।

पति-पत्नी मात्र स्त्री-पुरुष जीवन के हजारवें-लाखवें भाग में भी नहीं रहते। शेष जीवन में पति-पत्नी के लिए संचालन की तरह उपार्जन करता है, उसकी रक्षा करता है। वह उसके लिए मेहनत करता है, कमाई करता है श्रमिक की तरह, मित्र की तरह स्नेह-सहयोग देता है। इसी प्रकार वह कितनी ही भूमिकाएँ निभाता है। पत्नी भी माँ की तरह उसकी सेवा करती है, भोजन पकाती है, खिलाती है और पुत्री की तरह उसके सबल पौरुष की छाँह में सुरक्षा पाती है। वह मित्र की तरह कठिन समय में उसे धैर्य बँधाती है और सहयोग देती है। यह पवित्र सेवापरक, स्नेहपरक, मैत्री परमसुख देना व पाना ही दाम्पत्य का सच्चा

सुख होता है। अतः उस आकस्मिक आसक्ति को शारीरिक परिचय की सीमा से आगे बढ़ाना बहुत आवश्यक है।

पारस्परिक कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति आवश्यक होते हुए भी निम्नगामी नहीं होनी चाहिए। दैहिक विकारों से उसकी गरिमा घटती है, इन्हें कला और सेवा के साथ जोड़ा जा सकता है। पति-पत्नी के एकान्त क्षणों में भी इसका विशेष ध्यान रखना बहुत अच्छा रहता है।

कुछ समय का वियोग दाम्पत्य को प्रगाढ़ बनाने में बहुत सहायक होता है। यह थोड़े समय का बिछोह दोनों को और भी निकट ला देता है। साथ रहते-रहते एक-दूसरे की भावनाओं और उपयोगिता को समझ पाने की स्थितियाँ प्रयास करते हुए भी कम हो जाती हैं जितनी एक-दूसरे से दूर रहने पर उत्पन्न होती हैं। वह होते तो ऐसा करते, अमुक कठिनाई हम तक नहीं आने देते या कितना सूना हो जाता है उनके बिना। ऐसी बातें प्रायः पत्नी को पति के दूर होने पर अनुभव होती हैं। वही पति जिसे साथ रहते समय पत्नी के कामों में कोई न कोई नुक्श नजर आता था, उसके थोड़े दिन मैके चली जाने पर अनुभव करता है कि पत्नी के होते उसे कितना आराम, प्रेम और सुख मिलता था। यह बिछोह एक-दूसरे को समझने में भी मदद करता है। ऐसे बिछोह के अवसरों की इस उपयोगिता को समझते हुए जब पत्नी मैके जाने की इच्छा करे या उसके माता-पिता आदि उसे लेने आये तो पति को उन्हें निराश नहीं करना चाहिए।

प्रायः ऐसा होता है कि पत्नी अपनी शारीरिक अस्वस्थता, मानसिक उलझन और अन्य किन्हीं कारणों से पति द्वारा चाहे गये व्यवहार या सदा की तरह किये जाने वाले व्यवहार से कुछ भिन्न अपनाती है। उसके इस व्यवहार को अपनी उपेक्षा मानने की भूल करने वाले पति का यह अनुमान प्रायः गलत होता है, उन्हें उस व्यवहार के कारणों को खोजना चाहिए, नहीं तो थोड़े दिन तो वह ऐसे व्यवहार को सहता रहेगा, पर मन ही मन यह धारणा पक्की होती जायेगी कि उसकी उपेक्षा ही रही है। यही

भूल पत्नियाँ भी कर जाती हैं। बाहर की नौकरी-व्यवसाय आदि की समस्याओं में उलझा पति यदि उसके बताये हुए बाजार के काम नहीं कर सका या उसके लिए समय नहीं मिला तो पत्नी ने पूछा और वह कहीं और उलझा हुआ उसका उत्तर नहीं दे पाया या उसके व्यवहार में कोई रुक्षता आई तो उसे अपनी उपेक्षा न मान उसके पीछे छिपे कारणों को खोजने का प्रयास करना आवश्यक होता है। इसके बिना सत्य क्या है ? पता नहीं चलता और असत्य ही सत्य बनता चला जाता है और जब यह अनुभव होने लगता है कि मेरी उपेक्षा हो रही है तो पारस्परिक वितृष्णा उनके भावी जीवन के लिए अच्छी नहीं होती।

संपूर्ण समर्पण की जो बात दाम्पत्य जीवन के लिए आवश्यक मानी जाती है। वह वास्तव में अपने अहम् का नियमन करने के अर्थ में ही सही ठहरती है। एक-दूसरे की बात व व्यवहार को सहज रूप में लेने की बजाय उसे अपने अहम् पर पड़ने वाली चोट समझा जाए तो पति-पत्नी में कलह का विषवृक्ष पनपने लगता है। इसलिए समझदार दम्पत्ति किसी ने कुछ कहा और वह दूसरे को प्रिय नहीं लगा तो उसमें कहीं न कहीं दोनों का हित खोजने का प्रयास करते हैं। यह सही भी है कि पति-पत्नी के बीच कभी ऐसे प्रसंग आते भी हैं तो उसके पीछे उनके संबंधों को मधुर बनाने का ही प्रयोजन रहता है।

किसी को अपने से बड़ा, योग्य व अनुभवी तो माना जा सकता है किन्तु वह भी अंततः मनुष्य ही होता है। देवत्व और दानत्व का मिला-जुला रूप, गुण और दोषों का एक समन्वित स्वरूप। यदि पति-पत्नी के मन में जो एक-दूसरे के योग्य, बड़ा प्रेममय आदि कोई स्वरूप बन गया है तो उसके साथ दुराग्रह नहीं जुड़ना चाहिए। मनुष्य ही मानकर चला जाना ठीक रहता है, उस मन में बनी तस्वीर के विपरीत किसी का आचरण या व्यवहार दीखे तो सहज मानव प्रकृति मानकर उसे दूर करने का प्रयास तो ठीक रहता है, पर उस बात को लेकर अपने श्रद्धा, निष्ठा, विश्वास और ममत्व में कमी करना ठीक नहीं रहता।

इससे संबंधों में शैथिल्य आने लगता है और वह क्रमशः चलता ही रहे तो परिणाम बहुत बुरे हैं।

प्रशंसा की चमत्कारी शक्ति सर्वविदित ही हैं, उससे भी लाभान्वित होने का लाभ विवेकशील दम्पत्ति ही उठाते हैं। प्रशंसा करना और प्रशंसा सुनना यह दोनों ही गुण पति-पत्नी अपने में विकसित करें तो एक-दूसरे की प्रगति में सहायक हो सकते हैं और दाम्पत्य रस अभिवर्धन में भी।

प्रशंसा करना भी एक कला है और सुनना भी एक कला है। प्रशंसा में कार्यों को प्रमुखता दी जाए न कि व्यक्ति को और सुनने में भी अपने सत्कार्यों, व्यक्तित्व व व्यवहार के विकसित करने की कामना उत्पन्न हो न कि अहंकार। पत्नी ने सूझबूझ से कोई नुकसान होने से बचा लिया हो या कोई कार्य सुरुचिपूर्ण ढंग से ही कर दिया हो तो उसकी प्रशंसा करना ही चाहिए। यह सोचना कि यह तो उसका दायित्व है, प्रशंसा करने की क्या आवश्यकता—यह तनिक भी ठीक नहीं। जो पत्नियाँ पति की प्रशंसा में कृपणता नहीं बरततीं वे उनके मन में अपना स्थाई निवास बना लेती हैं।

किसी के पास विश्वविद्यालय की बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ हों, प्रतिभा हो, योग्यता हो तो वह विद्वान् दाम्पत्य जीवन में असफल होते देखे जाते हैं। अतः सबको दाम्पत्य के उन व्यावहारिक सूत्रों की जानकारी होना बहुत आवश्यक है।

पति-पत्नी के बीच जो अपनेपन का भाव होता है वह प्रायः पारस्परिक शिष्टाचार व औपचारिकता को विस्मृत कर देता है। यह कुछ दम्पत्तियों के लिए जिनमें गहरी समझ और रुचि, स्वभाव का साम्य उत्पन्न हो गया हो के लिए तो ठीक हो सकता है किन्तु इससे पूर्व की स्थिति में शिष्टाचार व औपचारिकता का यथासाध्य निर्वाह अच्छा रहता है। इसके निर्वाह से दूसरों के लिए और बच्चों के लिए भी अच्छा रहता है, सभी इसका पालन करें तो लाभ ही होगा, हानि होने की संभावना नहीं है।

कभी-कभी यह शिष्टाचार और औपचारिकता का अभाव दूसरे लोगों के सामने पति-पत्नी के अपमानित-सा होने की अशोभनीय स्थिति उत्पन्न कर देता है। एक पक्ष अपने को आहत-अपमानित समझने लगता है जबकि दूसरे ने यह सब बिना सोचे-समझे कहा हो। जैसे मित्रों के सामने पत्नी के मैके वालों के संबंध में कोई ऐसी बात कह देने पर उसे वैसा ही अनुभव होता है। इसलिए अपनत्व का भाव तो रहे पर उसके साथ जो अधिकार अद्वैत का भाव आ जाता है उसकी अति न हो जाए, इसके लिए शिष्टाचार व औपचारिकता का पालन करना ठीक ही रहता है।

कई व्यक्ति अपने मित्रों के साथ वार्तालाप करते समय भी कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग करते देखे जाते हैं जो शिष्टता की सीमा में नहीं आते। वैसा ही कुछ पत्नी के साथ भी कुछ व्यक्ति व्यवहार करते हैं, वे समझते हैं कि यह उनकी अभिन्नता की अभिव्यक्ति है। हमारे बीच कोई परायापन नहीं—यह सोचकर उस औचित्य को स्वीकारते हैं, पर कभी-कभी यह अनुचित भी हो जाता है। घर में, अकेले में पत्नी को प्यार से कुछ ऐसे सम्बोधन से पुकारा जाना या बातों में वैसा कह देना तो उसे अखरेगा नहीं, पर स्वभाववश बाजार में या कई अपरिचितों के सामने वैसी बात मुँह से निकल जाने पर स्वयं पति को भी लज्जित होना पड़ता है और पत्नी को भी। पत्नी की ओर से भी ऐसी ही भूलें हो सकती हैं। समय और स्थिति को देखे बिना पति पर हुक्म चलाना प्रायः बुरा लग जाता है। यदि ऐसी आदत ही न डाली जाए तो ऐसी स्थिति से बचा जा सकता है जो पाते-पत्नी के संबंधों के बीच लकीरें खींचती है और यह क्रम चलता रहे तो दरारें उत्पन्न हो जाती हैं।

कटु-भाषण और गाली-गलौज, कलह आदि से दम्पत्तियों को बचना आवश्यक होता है। यह बात सही है कि जहाँ दो बर्तन होंगे तो वे भी एक-दूसरे से टकराकर आवाज पैदा करेंगे तो पति-पत्नी के बीच भी वैसे प्रसंग आ सकते हैं। वहाँ

एक-दूसरे की भूलों को, अनुचित व्यवहार को उसे बताना जरूरी हो जाता है किन्तु उनका ढंग सदा शिष्ट और सौजन्यपूर्ण हो। घर की यह बात बाहर नहीं जाए इसका ध्यान रखना ही चाहिए। मारपीट जैसी महामूर्खतापूर्ण बात तो होनी ही नहीं चाहिए। किसी पक्ष को दूसरे से नाराजगी है तो बोलचाल बन्द करके, खाना छोड़कर या अन्य तरीकों से भी अभिव्यक्त किया जा सकता है।

कोई ऐसा जोड़ा हो जिसमें पति-पत्नी किसी बात पर आवेशग्रस्त होकर पत्नी पर हाथ उठा बैठे तो उसमें पति तो महादोषी है ही किन्तु विवाह के बन्धन कुछ ऐसे अटूट होते हैं कि उनसे मुक्ति संभव नहीं हो सकती, फिर ऊपर से बच्चे-बच्ची भी आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में पत्नी को मन मारकर साथ रहना और अपमान के कड़वे घूँट पीना पड़ता है, किन्तु पत्नी यह सोचने का प्रयास करे कि पति ऐसा क्रूर क्यों हो जाता है ? क्या उन कारणों को दूर कर सकती है ? यदि इन प्रश्नों का उत्तर 'हाँ' में मिलता है तो उसे उदास या जिन्दगी से बेजार होने की अपेक्षा उन कारणों को दूर करना ही चाहिए। कोई भी व्यक्ति भीतर से वैसा क्रूर नहीं होता, अतः पत्नी के ये प्रयास धैर्यपूर्वक चलते रहें तो उसकी खोई खुशियाँ पुनः देर-सबेर मिल ही जायेंगी। यह मार्ग अपनाने की बजाय यदि ढिढोरा पीटना आरम्भ कर दें तो परिणाम प्रायः अच्छा नहीं निकलता।

यदा-कदा एक-दूसरे से सन्तुष्ट दम्पत्तियों के बीच भी किसी न किसी बात को लेकर अप्रिय प्रसंग आ जाते हैं उन्हें टालना तो ठीक रहता है, पर वे क्यों उत्पन्न हुए और भविष्य में ऐसे प्रसंग न आएँ उनका कोई स्थाई हल अपने विचार, स्वभाव, व्यवहार से सुधार करके लाया जाना अच्छा रहता है। उसे यों ही टाल दिया जाए तो फिर वैसा ही प्रसंग आ सकता है, बार-बार वैसे प्रसंग आने पर संबंधों में दरार भी उत्पन्न हो सकती है।

स्त्रियाँ ममता, सेवा, त्याग, सहनशीलता और समर्पण की देवियाँ होती हैं और पुरुष कर्म, गुणों का पौरुष, दृढ़ता, रुक्षता व बुद्धि प्रधान होता है। यह सामान्य वर्गीकरण स्त्री वर्ग पर तो लागू होता है किन्तु यदि कोई पति स्त्री वर्ग में पाये जाने वाले गुणों का होता है तो उसके जीवन में असन्तोष का उत्पन्न हो जाना अधिक संभव होता है ? क्योंकि सभी पुरुष एक से नहीं होते, सभी स्त्रियाँ एक-सी नहीं होतीं। इसकी अपेक्षा उनका सहधर्म भी है, उसे समझकर उसी रूप में स्वीकार करना सन्तोष का हेतु बनता है।

पति-पत्नी की प्रेमरूपी जड़ें विश्वास की उर्वर और गहरी भूमि में जिस प्रकार बढ़ती हैं, उसी प्रकार उनका कलेवर भी बढ़ता जाता है। पति-पत्नी को परस्पर विश्वासी होना चाहिए। किसी भी शंका पर दूसरों की कही-सुनी बातों पर विश्वास करने की बजाय सीधे-सीधे एक-दूसरे से पूछ लेना चाहिए। पति-पत्नी दोनों ही एक-दूसरे के उस विश्वास की रक्षा अवश्य करें। वकील की तरह किसी बात पर एक-दूसरे से जिरह करने की अपेक्षा संयत रहना कहीं ज्यादा अच्छा होता है। ईर्ष्या दाम्पत्य रूपी वृक्ष की जड़ों के नीचे आ जाने वाली चट्टान का काम करती है, उससे बचने का सबसे बड़ा साधन विश्वास ही है। ईर्ष्या मनोमालिन्य उपजाती है और विश्वास उसे दूर करता है।

रुपये-पैसे के मामले में पति-पत्नी के बीच कोई दुराव-छिपाव रखना ठीक नहीं होता। पति किस धन्धे से किस प्रकार कितना कमाता है यह पत्नी को ज्ञात होना चाहिए। जो पति अपनी आय और उसके स्रोत से पत्नियों को अनभिज्ञ रखते हैं, वे भूल करते हैं। जो यह मानते हैं कि यह उनका मामला है, हाँ यह ठीक है कि घर की भीतरी व्यवस्था का दायित्व सामान्य रूप से पत्नी के हाथ में होता है और उपार्जन आदि बाहरी कामों का सूत्र-संचालन पति करता है। दोनों अपने क्षेत्र में पूरी तरह स्वतन्त्र तो रहें, पर एक-दूसरे को इस बात का ज्ञान होना

चाहिए कि परिवार की आय का स्रोत क्या है और कितना है ? यह किस प्रकार खर्च होता है ?

पति द्वारा अपनी आय का ब्यौरा दे देने से पत्नी के लिए तद्नुरूप ही गृह-संचालन करने की सुविधा उत्पन्न हो जाती है। यह बात दूसरी है कि पत्नी दूरदर्शिता से आड़े वक्त के लिए कुछ पैसे बचाकर जोड़ती रहती है। अच्छा यह रहता है कि पति-पत्नी ही नहीं परिवार के सब सदस्य मिलकर परिवार का बजट बनाएँ, उससे एक लाभ तो यह होगा कि सभी को पता लगेगा कि हमें अपनी सौर जितने ही पाँव पसारने हैं, दूसरे उन्हें अपने महत्त्व का भी भान होगा और पारिवारिक साम्राज्य में भी अपनी भूमिका पूरी तरह समझ लेंगे।

जहाँ पति-पत्नी दोनों कमाते हों वहाँ भी यह बात लागू होती रहे तो अच्छा है। अनुभवियों का कहना है कि जहाँ पति भी कमाता है और पत्नी भी कमाती है, वहाँ व्यय को लेकर अधिक मतभेद खड़े हो जाते हैं। अतः इस संबंध में सावधानी बरतना ही ठीक रहता है। आय-व्यय का बजट सावधानी व सूझबूझ से बनाना चाहिए।

अमेरिकन मदर्स कमेटी की अध्यक्षा श्रीमती लिलियन डी. पोलिंग का अपना मत है—'मैं मानती हूँ कि हर परिवार को अपनी आय का दसवाँ हिस्सा परोपकारी व समाजसेवी कार्यों में व्यय करना चाहिए। अधिकांश दम्पत्ति यह कहेंगे कि वे इतने सम्पन्न नहीं हैं, लेकिन जब आप अपनी आय का कुछ हिस्सा इस तरह परोपकार के लिए अलग रखने लगेंगे तो आप देखेंगे कि वास्तव में आपके हाथ उतने तंग नहीं हैं जितना कि आप अब तक समझते थे।'

श्रीमती पोलिंग का यह कथन भले ही कुछ अजीब-सा है किन्तु इसकी सच्चाई को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। मन की गरीबी व्यक्ति को गरीब ही बनाये रखती है। जब अपनी आय का एक निश्चित अंश ऐसे कामों के लिए निकाला जायेगा तो

पति-पत्नी एक अनूठे आनन्द, अनुपम आत्म-सन्तोष से आप्लावित हो उठेंगे।

ऐसी ही एक व्यवहारिक अनुभव सिद्ध राय उन्होंने महिलाओं को दी है—'वास्तव में विवाह साझेदारी है, उसमें लेना भी होता है और देना भी। सच मानिये तीन चौथाई देना' पत्नी के ही हिस्से में पड़ता है। मैं यह नहीं कहती कि पत्नी को पति के सही-गलत सब निर्णय चुपचाप स्वीकार कर लेने चाहिए, लेकिन झुकने में कोई नुकसान नहीं होता बल्कि झुकना एक बहुत अच्छी कसरत है, इससे शरीर लचीला बना रहता है और नैतिक और आत्मिक शक्ति भी।

अमेरिका जैसे देश जहाँ 'विमेन लिव' जैस आन्दोलन भी हुए हैं, की एकमात्र संस्था की अध्यक्षा और अनुभवी महिला का यह सुझाव कहाँ तक युक्तिसंगत है कि यह सब दम्पत्तियों के लिए व्यवहारिक हो यह तो कहा नहीं जा सकता फिर भी पत्नी को तीन चौथाई देना पड़ता है—इस सच्चाई को स्वीकारना ही पड़ता है। उनका सुझाव भी उपयोगी है यह तो मानना ही पड़ेगा।

अपने वैवाहिक जीवन पर असंतोष और अपने जीवन सहचर की अन्यों से तुलना करना तत्संबंधी अपनी निराशा एक-दूसरे के सम्मुख प्रदर्शित करना उस असन्तोष को और भी गहरा और निराशा को तीव्र बना देता है, यह अच्छा दृष्टिकोण नहीं कहा जा सकता। दुनिया में एक से एक अच्छे, सुन्दर, योग्य, सम्पन्न तथा व्यवहारकुशल स्त्री-पुरुष हैं यदि उनमें से किसी एक के साथ मेरा संबंध जुड़ा होता तो मेरा जीवन कितना सुन्दर, सुखद और सफल होता यह सोचना मनुष्य को तोड़कर रख देता है। 'मैं किसके पल्ले पड़ गयी' या 'मेरे गले कैसे रस्सी पड़ गई' यह रोना कुछ अर्थ नहीं रखता। उस स्थिति में उबरने का एक ही मार्ग है और वह है स्वयं सतत् प्रयत्नशीलता और आशावादी बने रहना।

पति-पत्नी के बीच शारीरिक-मानसिक आकर्षण का बना रहना दाम्पत्य की सफलता का एक आवश्यक आधार है। आकर्षण बनाये रखने के लिए सादगी, सरलता व मितव्ययता को त्याग देना आवश्यक नहीं है। आकर्षण का मूल सौन्दर्य है। सौन्दर्य सभी स्त्री-पुरुषों को मिला होता है यह कहना जितना गलत है उतना सही भी है। सच बात तो यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक बनावट में कहीं न कहीं कुछ न कुछ सौन्दर्य होता ही है। सुन्दर कहे जाने वालों में भी कहीं न कहीं असुन्दरता दिखाई पड़ ही जाती है और असुन्दर माने जाने वालों में भी कहीं न कहीं सौन्दर्य होता है। पारस्परिक आकर्षण बन्धन के लिए शारीरिक सौन्दर्य का वह उजला पक्ष ही सही ढंग से दिखाया जाए तो वही आकर्षण जन्म ले लेता है। महत्त्वपूर्ण होता है प्रस्तुतीकरण का ढंग, और देखने वाले का पारखीपन। पति-पत्नी यदि उस दृष्टि को उपजा सकें तो वे दुनिया की निगाह में भले ही अनाकर्षक हों उनकी अपनी और दूसरों की निगाहों में तो आकर्षक बन ही जाते हैं। अधिक और आकर्षण की उपयोगिता भी यहीं तक है।

शरीर की तरह मन का भी वैसा ही आकर्षण उत्पन्न किया जा सकता है। यह मानसिक आकर्षण शारीरिक आकर्षण से कई गुना महत्त्वपूर्ण और प्रभावी होता है। श्रृंगार, आभूषण, मेकअप, भड़कीले वस्त्र आदि बनावटी चमक तो उत्पन्न कर सकते हैं किन्तु स्थाई आकर्षण सादगी, सुरुचि, सम्पन्नता, उत्तम स्वास्थ्य व स्वच्छता में ही निवास करता है। प्रसन्नता, मधुर व्यवहार, उल्लास, विनोदप्रियता, कलाप्रियता आदि ऐसे गुण हैं, जो मानसिक आकर्षण को उपजाते और स्थाई बनाते हैं।

भावनाओं की क्रियात्मक अभिव्यक्ति और मधुर स्वप्नों को साकार बनाने के लिए दाम्पत्य व्यवहार की प्रमुख बातों पर पिछले लेखों में बहुत कुछ प्रकाश डाला जा चुका है। उसी क्रम में उन व्यवहारिक तथ्यों को बताया जा रहा है।

पति-पत्नी में किसी को अपनी कौटुम्बिक श्रीसम्पन्नता, व्यक्तिगत सुन्दरता, योग्यता, प्रतिभा और किसी पक्ष को लेकर अभिमान नहीं करना चाहिए। पत्नी के माता-पिता अच्छे सम्पन्न हैं, बचपन में उसने उस सम्पन्नता को जीभर भोगा है किन्तु उसके पति की कौटुम्बिक सम्पन्नता वैसी नहीं थी तो पत्नी को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह अपनी बातों और व्यवहार में उसको प्रकट न करे। इससे पति का स्वाभिमान आहत होता है। जो पत्नियाँ अपने मैके की सम्पन्नता और ससुराल की विपन्नता को लेकर आलोचना-प्रशंसा करती हैं, वे इस प्रकार की भूल करके अपने सुखी गृहस्थ जीवन में आग लगाती हैं। यही बात पति द्वारा भी हो सकती है। उसी प्रकार अपनी सुन्दरता, योग्यता, शिक्षा, प्रतिभा आदि का गर्व भी किसी पक्ष को नहीं करना चाहिए। यदि ऐसा करना ही हो तो उसमें दूसरे पक्ष को भी मिलाकर व्यक्ति की नहीं दम्पत्ति की प्रशंसा करने से मनोमालिन्य उत्पन्न नहीं होता।

उसी प्रकार बाहर के व्यक्तियों के सामने पति का पत्नी से अनावश्यक सेवा लेना या उससे पत्नी की तरह नहीं नौकरानी की तरह व्यवहार करना उसे भीतर ही भीतर कचोट जाता है। पति रहे हों स्वभाव के सरल व पत्नी के हर कार्य में सहयोग देने व अनुरोध को मानने वाले पर अपनी सहेलियों और उनके मित्रों के सामने पत्नी यदि उन्हें ऐसे आदेश देती हो जैसे वे उन्हीं के वशवर्ती हैं तो पत्नी के इस व्यवहार से वे स्वयं को अपमानित होना ही अनुभव करेंगे।

यह ठीक है कि पति के हर अनुरोध को पत्नी अपना दायित्व समझकर मान लेती है या पति अपनी पत्नी के हर अनुरोध को उसी प्रकार स्वीकारते हैं। इससे एक-दूसरे को यह प्रतीति है कि देखो वे हमें कितना मानते हैं और अपनी इस पारस्परिक सहकारिता को अपने मित्रों-परिचितों पर प्रकट करके अपने मधुर दाम्पत्य की एक झलक उन्हें दिखाना चाहते हैं। यह चाहना स्वाभाविक है और बुरा भी नहीं है, पर उसके लिए जो

ढंग अपनाया जाता है वह गलत होता है, इसको वार्तालाप द्वारा भी प्रकट किया जा सकता है। आदेश-अनुरोध का स्वर दूसरी तरह का भी हो सकता है, जिसमें अपनी गुरुता और दूसरे की लघुता की ध्वनि न निकले। पत्नी को—'मधु ! सुरेश के लिए चाय बनाओ।' कहने की अपेक्षा में यह कहा जाये—'भाई ! चाय बनाना तो कोई मधु से सीखे। चीनी के साथ वह और भी कुछ मिलाती हैं जिसका स्वाद किसी दूसरे के हाथ की बनी चाय में नहीं मिलता। सुरेश की आने की खुशी में वैसी ही और चाय बना दो, इसके साथ-साथ हम भी तृप्त हो लेंगे।' तो बात कुछ और ही हो जायेगी।

दाम्पत्य जीवन में स्वावलम्बन और सहयोग का समन्वय ही आवश्यक होता है। एक-दूसरे को सहयोग देना ही चाहिए, पर वह अति की सीमा न लाँघ जाए और न बिल्कुल ही असहयोग किया जाए कि दूसरा पक्ष स्वयं ही गृहस्थी की चक्की में अकेला पिसता हुआ अनुभव करे। संतुलित सहयोग से पारस्परिक प्रीति बढ़ती है पर यदि घर के हर काम को अपना काम समझकर साथी के सहयोग की अपेक्षा किये बिना किया जाता रहे तो वह दूसरे की उपयोगिता-आवश्यकता पर चोट करेगा। पति यदि घर के सारे काम अपने हाथ से करने लगे तो पत्नी मन में यह सोचे बिना नहीं रह सकेगी कि इन्हें मेरी जरूरत ही क्या थी ? अपने क्षेत्र का काम पति-पत्नी मुख्य रूप से सम्हालें, पर दूसरे के कामों में भी थोड़ा सहयोग देते रहें तो इससे एक-दूसरे का ध्यान रखने की बात स्पष्ट होती है जो प्रीति को प्रगाढ़ बनाती है।

पति, पत्नी का काम में थोड़ा हाथ बँटा दे और पत्नी पति के कामों में सहयोग दे—यह सहयोग आवश्यक ही नहीं आकर्षक भी है। चाहे यह सहयोग किसी छोटे-से काम में ही मिला हो एक-दूसरे के मन को मुदित करता है।

पति-पत्नी के क्षेत्राधिकार सामान्य रूप से एक अलिखित विधान की तरह घर और बाहर में बँट जाते हैं। भारतीय ही

नहीं विश्व के सभी परिवारों में सामान्यतया घर की मालिक पत्नी और बाहर का कर्त्ता पति होता है। अतः दोनों के बीच अपने आप हो जाने वाले समझौते का सीमातिक्रमण किसी को नहीं करना चाहिए। पत्नी के अधिकार क्षेत्र में पति-सम्मति, सुझाव और सहयोग का अधिकारी है। यह उसका अधिकार ही नहीं दायित्व भी है। इसी प्रकार बाहर के मामलों में पत्नी के भी वैसे ही अधिकार और दायित्व होते हैं। इनका साामान्य रूप से निर्वाह होता रहे तो कोई गतिरोध उत्पन्न नहीं होता, पर एक-दूसरे के क्षेत्र में अनावश्यक दखलन्दाजी करने पर उत्पन्न हो सकता है—इसका ध्यान रखा जाना आवश्यक है। सम्पत्ति के मामले में योग्यता, विवेक व बुद्धि के आधार पर किसी को प्रमुख बनाया जा सकता है, पर वह उसे लेकर अभिमान व दूसरे पक्ष पर दबाव डाले तो संबंधों में रूढ़ता आने लगती है।

जीवन के प्रति सही दृष्टि लेकर चलने का दाम्पत्य संबंधों और उनकी मधुरता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। जो व्यक्ति जीवन को मात्र फूलों की सेज मानकर चलते हैं या वैसा ही पाने की आकाँक्षा सँजोये रहते हैं वे भूलते हैं। जीवन में सुख और दुःख दोनों ही आते हैं, दोनों को भोगने के लिए समान रूप से उत्साह सँजोये रखने वाले व्यक्ति ही उसका सच्चा आनन्द उठा सकते हैं। जो दम्पत्ति विवाह के पूर्व अपने भावी दाम्पत्य जीवन को मात्र सुखों की सेज मानकर उसमें प्रवृत्त हुए थे उनकी यह मान्यता जब यथार्थ के थपेड़ों से टूटने लगती है, तब प्रायः ऐसा होता है कि वे दुःख का कारण अपने जीवन साथी को मानने लगते हैं—यह एक प्रकार का दुराग्रह ही हो सकता है।

जब कोई एक पक्ष जीवन को बोझिल, कँटीला, असह्य मानकर उसका कारण अपने साथी को समझने लगता है तो बात-बात पर झल्लाने, डाँटने, फटकारने और कलह करने लगता है। ऐसी स्थिति में दुःख और भी असह्य हो जाता है। जिस दुःख को एक-दूसरे के स्नेह, सेवा, सहानुभूति और जीवनोत्साह के सहारे सह्य बनाया जा सकता था, वही अब भयंकर हो

उठता है। इसलिए आरम्भ से ही जीवन का यथार्थ स्वरूप लेकर चलना ठीक रहता है। संभावित दुःखों के लिए की गयी यह पूर्व मानसिक तैयारी उन्हें सहने, परिणाम पाने में बहुत सहायक होती है।

अपने दुःख में भी यथासंभव बहादुरी से काम लेने वाले और अपने साथी पर उसका बोझ नहीं डालने वाले पति-पत्नी एक-दूसरे पर अपने दुःख का भार डालकर उसे किनाराकसी करने की ओर उन्मुख नहीं करते—यह विवेकपूर्ण बात है। प्रकट करना ही पड़े तो वह इस रूप में हो कि इससे दूसरे पक्ष को चोट न पहुँचे। पति का अफसर उससे नाराज है, ऑफिस में वह उससे अच्छा व्यवहार नहीं करता इससे पति दुःखी है। किन्तु वह अफसर का कुछ कर नहीं सकता, ऐसी स्थिति में ऑफिस में उत्पन्न हो चुके रोष को पत्नी से लड़-झगड़कर उतारा जाए वह निरी मूर्खता ही है। पति बाहर से थका-हारा लौटा है और श्रीमतीजी दिनभर के अपने कष्टों का कच्चा चिट्ठा उनके मत्थे मारकर उस खीझ से मुक्ति पा लेती हैं जो बच्चों के ऊधम, पड़ौसियों के व्यवहार या अन्य कारणों से उपजी है। ऐसा रोज ही होने लगे तो पति-पत्नी का पारस्परिक प्रेम-रंग चाहे वह कितना ही गहरा क्यों न हो धीरे-धीरे उतरता जायेगा और एक दिन जब वह बिल्कुल ही धुल-पुछ जायेगा तो पति-पत्नी एक-दूसरे की सूरत से ही चिढ़ने लगेंगे।

परस्पर मिलते समय यथासंभव प्रसन्न और उल्लसित रहना वह टॉनिक है जो दाम्पत्य जीवन और यौवन को स्थायित्व प्रदान करता है। घटनाओं पर पति-पत्नी का वश न हो, पर अपने आवेगों पर अंकुश लगाने की क्षमता हो तो विकट परिस्थितियों में भी वे एक-दूसरे के सहारे हँस सकते हैं, मुस्करा सकते हैं।

पति कितना ही समझदार और पत्नी कितनी ही सहनशील हो फिर भी यह बात वे कभी पसन्द नहीं करते कि 'उनका साथी किसी दूसरे स्त्री-पुरुष से उसकी तुलना करे व दूसरों

की सराहना करे। पत्नी को पति का यह कहना—'देखो ! श्रीमती माथुर किस सुघड़ता से घर सँभालती हैं' और पत्नी द्वारा किसी अन्य मित्र या पुरुष की प्रशंसा करना कभी एक-दूसरे को अच्छा नहीं लगेगा। यह भूल अच्छे-अच्छे दम्पत्तियों मे मनोमालिन्य व शंकाएँ उपजा ही देती हैं।

पारस्परिक निष्ठा पति-पत्नी के लिए बहुत आवश्यक है। विवाह के पहले का जीवन कैसा ही रहा हो, बाद का जीवन एकनिष्ठ होकर जीना बहुत आवश्यक है। पति भूलकर भी विवाह के पूर्व किसी अन्य स्त्री से रहे रागात्मक संबंधों का जिक्र पत्नी से न करे और न ही पत्नी को इसके लिए विवश करे। अति भावुकता के शिकार होकर लाड़ में पति-पत्नी अपने विश्वास या निष्ठा को प्रदर्शित करने के उद्देश्य से अपने विवाह के पूर्व की ऐसी बातें एक-दूसरे से कह देते हैं। यह भावुकता पिच्चानवे प्रतिशत दम्पत्तियों के बीच सन्देह का अंकुर उपजा देती है जो जरा-सी हवा पाकर भभक उठने वाली राख में दबी चिंगारी की तरह थोड़ा-सा सहारा पाते ही पनप कर उनके विश्वास को तोड़ देती है।

पुत्री के लिए 'दुहिता' शब्द का प्रयोग करने के पीछे यही अर्थ है कि उसके दूर रहने में ही हित है। पति-पत्नी बचपन से ही एक-दूसरे से परिचित होते हैं, उनके जीवन के भले-बुरे प्रसंगों से विज्ञ होते हैं तो उनके भावी जीवन में झंझावत आने की परिस्थितियाँ अधिक आती हैं। जीवन के बुरे प्रसंग वर्तमान में प्रेत की तरह आ धमकते हैं और उन्हें एक-दूसरे से विरक्त बना देते हैं। किसी और दृष्टि से विवाह पूर्व गयी-गुजरी सच्चाइयों को साथी पर प्रकट करना ठीक हो सकता है या नहीं यह हमारा विषय नहीं। व्यावहारिकता के क्षेत्र में तो वे वर्जित ही हैं, जो दम्पत्ति यह नहीं चाहते कि उनके दाम्पत्य जीवन में कोई झंझावत आये और विश्वास के वृक्ष पर जमे उनके नीड़ को ही बिखेरकर रख दे तो उन्हें अपने अतीत के संबंधों की गठरी को

बँधी ही रहने देना चाहिए, साथी से कुछ भी छिपा नहीं रखने का यह भावुकता भरा जुआ उन्हें नहीं खेलना चाहिए।

विवाह से पूर्व देखे गये ये स्वप्न यदि मात्र कल्पना की उड़ान नहीं है तो उन्हें साकार होना ही चाहिए। उन सपनों को जैसे सत्य का जामा पहनाया जा सकता है, उसके लिए भावनाओं और व्यावहारिकता के दोनों पाँव को स्वस्थ व सबल बनाकर अभीष्ट लक्ष्य की ओर एक-एक डग भरते हुए बढ़ना पड़ता है। कभी गिरते भी हैं तो फिर खड़े होने वाली बात को भुला नहीं देना चाहिए। यों प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक-मानसिक रचना में भेद होता ही है फिर भी सामान्य अवयव, कलेवर व मानस का एक सामान्य स्वरूप अवश्य होता है। ऊपर वर्णित व्यावहारिक सत्य भी सामान्य रूप से सभी दम्पत्तियों के साथ लागू होते हैं, फिर भी किन्हीं को ये निरर्थक भी लग सकते हैं इससे इनकी उपयोगिता कम नहीं हो जाती।

दाम्पत्य जीवन की बगिया जब महकती है तो उसके सौरभ से परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व भी पुलकित-प्रफुल्लित होता है। अतः दाम्पत्य की मधुरता बनी रहे, वह सफल व सार्थक हो—इसमें पति-पत्नी का अपना ही सुख-दुःख नहीं है, सारे समाज का सुख-दुःख जुड़ा है। अतः यह पति-पत्नी की कामना ही नहीं दायित्व भी है। आज के युग में स्थिति यहाँ तक आ पहुँची है कि कुछ लोग विवाह संस्था को ही अनावश्यक मानने लगे हैं। ऐसी स्थिति में इस बुद्धिवाद के युग में दाम्पत्य व्यवहार का जानना और भी आवश्यक हो गया है। उपरोक्त तथ्य उस प्रयोजन को बहुत कुछ पूरा कर सकता है।

● ●

अहंकार और दाम्पत्य-प्रेम में एक रह सकता है, दोनों नहीं

महारानी विक्टोरिया के जीवन का एक बहुत मार्मिक प्रसंग है—एक दिन उन्होंने अपने पति एल्बर्ट की किसी बात पर चिढ़कर कह दिया—'महारानी मैं हूँ।' महारानी के इस अहंकार की चोट खाकर एल्बर्ट का पौरुषेय स्वाभिमान जाग उठा। वे वहाँ से उठे और अपने विश्राम-कक्ष में जाकर लेट गये, भीतर से दरवाजा बन्द कर दिया। महारानी के व्यंग के कारण उनका हृदय झुलस गया।

महारानी अपने पति की वेदना ताड़ गयीं। वे उनके विश्राम-स्थल के पास गयीं और द्वार खटखटाया। एल्बर्ट ने पूछा कौन है ? विक्टोरिया ने अपने उसी प्रशासनिक लहजे में उत्तर दिया—'महारानी विक्टोरिया।' एल्बर्ट उत्तर सुनकर यथावत् चुप रहे, उन्होंने उठकर दरवाजा खोलना तो दूर कुछ बोले भी नहीं।

अब कहीं जाकर विक्टोरिया को अपनी भूल समझ में आई। उन्होंने पुनः दरवाजा खटखटाया। एल्बर्ट ने पुनः प्रश्न किया कौन ? इस बार महारानी ने मृदुल स्वर में उत्तर दिया—'आपकी प्यारी पत्नी।' एल्बर्ट का सारा क्रोध, सारा दुःख दूर हो गया। उन्होंने उठकर द्वार खोल दिये, दोनों के हृदय पुलकित हो उठे, मन का सारा गुबार क्षणभर में धुल गया।

सुखी गृहस्थ के लिए आवश्यक है कि पति-पत्नी दोनों परस्पर एक-दूसरे को पूरक समझें। अपने को दूसरे से बड़ा मानना यह हेय धारणा है, जिससे दाम्पत्य का सौमनस्य चूर-चूर हो जाता है। ऐसे पति-पत्नी राष्ट्र और समाज को कोई बड़ा अनुदान दे सकें—यह बात तो दूर की है वे अपनी सामान्य

गृहस्थी में ही सुख और शांति स्थिर नहीं रख पाते। इसके लिए मुख्य भूमिका पुरुष की ही रहती है। स्त्रियाँ उतनी अभिमानिनी नहीं होतीं जितने कि पुरुष। गाँधीजी ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि उनके गृहस्थ जीवन के प्रारम्भिक दिनों में 'बा' बहुत हठीली थीं, इससे उनमें अक्सर वाद-विवाद हो जाता था किन्तु जैसे-जैसे उनका सार्वजनिक जीवन उज्ज्वल होता गया वैसे-वैसे कस्तूरबा का हठवादी स्वभाव भी तिरोहित होता गया और अन्तिम दिनों में तो उनका जीवन पूरी तरह बापू के ही जीवन में समा गया।

पारिवारिक जीवन में निरहंकारिता का समावेश मीठा बोलने और प्रणाम करने की आदत से प्रारम्भ किया जाता है। एक शायर का कथन है कि—

पेशदस्ती सलाम में अच्छी।
खुश कचामी कलाम में अच्छी।।

अर्थात्—पहले प्रणाम करे तो भद्र और मीठा बोले सो श्रेष्ठ।

यह अपेक्षा करनी चाहिए कि दूसरा मीठा बोलेगा—ऐसा सोचना तो अहंकार का ही पर्याय है। इस आदर्श की एक पक्षीय धारणा की जाये उसका निष्ठापूर्वक निर्वाह किया जाता रहे तो एक दिन प्रतिपक्षी को भी झुकने को विवश होना पड़ता है। सन्त सुकरात की पत्नी बहुत ही गुस्सैल स्वभाव की थीं, वे चाहे जब सुकरात का अपमान कर देती थीं। एक दिन सन्त सुकरात अपने मित्रों से बातचीत कर रहे थे, उनकी स्त्री उस दिन इतनी रुष्ट हुई कि सबके ही सामने बर्तनों का धुला हुआ बचा कीचड़ वाला काला पानी ही सुकरात के ऊपर उड़ेल दिया। सुकरात ने इसका रत्तीभर भी बुरा नहीं माना अपितु हँसकर बोले—'भाई वाह ! आज तक तो सुना था जो गरजते हैं वह बादल बरसते नहीं, पर आज पता चला कि जो गरजते हैं वह बरसते भी हैं।' सन्त की सहनशीलता के आगे कर्कश पत्नी पानी-पानी हो गयी

और उन्होंने उस दिन के बाद से अपना जीवन पूरी तरह बदलकर विनीत और शिष्ट बना डाला।

रूसी सन्त टाल्सटाय और अमेरिकी राष्ट्रपति लिंकन के विषय में कहते हैं कि लिंकन की धर्मपत्नी स्वभाव से बहुत उग्र थीं, उन्होंने एक दिन गर्म चाय का प्याला ही लिंकन पर उड़ेल दिया। दोनों ही उदाहरणों में पुरुष का अपना अहंकार अंत तक बीच में अटका रहा और उनके गृहस्थ जीवन में कभी भी शान्ति की शीतल बयार नहीं झाँकी। गृहस्थ जीवन में आये दिन विपरीत परिस्थितियाँ आती रहती हैं, पर यदि मीठा-मधुर बोलकर उनका निवारण कर लिया जाता रहे तो बात कहीं बन जाती है। मीठे मधुर बोल तो पशु-पक्षियों को भी आकर्षित कर लेते हैं, मनुष्य का तो कहना ही क्या ? कहावत है—

हर कुजा चशमाये बबद शीरी।
मरदुमां मुर्गी मोर गर्दायन्द।।

अर्थात्—जहाँ मीठे जल का झरना होगा, मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी वहाँ चले आयेंगे।'

जिन परिवारों में मीठा बोलने और विनम्र होने की परम्परा होगी वहाँ के बच्चे अभाव में भी असीम तृप्ति अनुभव कर रहे होते हैं, पति-पत्नी और अन्य कुटुम्बीजनों के सुख-सन्तोष का कहना ही क्या ? सुख-समृद्धि ऐसे ही घरों में बसती है। तुलसीदासजी ने लिखा है—

जहाँ सुमति तहँ सम्पत्ति नाना।
जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना।।

अर्थात्—जहाँ पर परस्पर प्रेम और सद्व्यवहार होता है वहाँ सुख-सम्पत्ति की कमी नहीं रहती किन्तु दुर्बुद्धिग्रस्त परिवार तो सदा विपत्ति में ही पड़े रहते हैं।

स्वामी रामतीर्थ ने लिखा है कि जब तक पति-पत्नी व्यक्तिगत अहम् व्यक्तिगत सम्मान से ऊँचे नहीं उठते तब तक दाम्पत्य जीवन की मधुरता संभव नहीं। उन्होंने समुचित सीख

देते हुए आगे लिखा है—"जिस समय किसी मित्र या प्रिय परिजन की चिट्ठी मिलती है उस समय उस चिट्ठी को जिसमें भावनाओं का अंकन मात्र होता है अभिव्यक्ति भी नहीं हम प्यार करने लगते हैं। इसी तरह पति तथा पत्नी एक-दूसरे के लिए मानो परमात्मा के पास से आई हुई चिट्ठी है, पत्नी के लिए परमात्मा की चिट्ठी है तथा पति के लिए पत्नी की। इस तरह का दृष्टिकोण विकसित करलें तो दोनों में अगाध प्रेम की निर्झरिणी प्रवाहित बनी रह सकती है।"

अहंकार एक प्रकार का अन्धकार है जो सही स्थिति का अनुभव नहीं होने देता। कई घटनाएँ परिस्थितिवश होती हैं, पर अहंकारी स्वभाव का चाहे वह पति हो या पत्नी, उस परिस्थिति को न देखकर व्यक्ति पर दोषारोपण करने लगते हैं, इससे कटुता उग्र होती है और विग्रह एवं अशांति दिनों-दिन बढ़ती चली जाती है, जब भी कभी कोई स्थिति आये तो पति-पत्नी दोनों को ही स्वस्थ चित्त से पारस्परिक हित को प्रधानता देकर सोचना चाहिए। अपने आपको पूर्ण निर्दोष मानना तथा प्रतिपक्षी को दोषी मानना अहंकारमूलक प्रवृत्ति है, उससे बचकर ही अपना दाम्पत्य प्रेम चिरस्थाई बनाया जा सकता है।

नर और नारी दोनों में से अपने आप में कोई भी पूर्ण नहीं। पुरुष की अपूर्णताएँ नारी में सन्निहित हैं तो नारी की पुरुष में। दोनों के परस्पर अभिमुख होने से ही वह अपूर्णता दूर होती और सांसारिक पूर्णता का आनन्द मिलता है। अभिमुख होने का अर्थ ही है—परस्पर एक-दूसरे की ओर खाली मन से देखना, एक-दूसरे की सुनना और समझना। जो अहंकारवश अलग-थलग पड़ जाते हैं उनकी जीवन मे घोर निराशा ही हाथ लगती है, इसके विपरीत परस्पर अभिन्न एकता में जीवन के सम्पूर्ण सुख समाहित हैं जिन्हें कोई भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकता है।

यदि हम अपने दाम्पत्य जीवन में प्रेम की अनुभूति चाहते हैं तो हमें शास्त्रकार के इस सदुपदेश को ही ग्रहण करना पड़ेगा—

सहृदयं सामनस्यमविशेषं कृणोमि वः।
अन्यो अभ्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाहन्या।।

—अथर्व वेद ३।३६।१

'मैं तुम्हारे लिए समान हृदय, समान मन होने तथा द्वेष से सर्वथा अलग होने की मर्यादा बनाता हूँ। तुम एक-दूसरे को ऐसा प्यार करो जैसे गौ अपने सद्य-जात बछड़े को प्यार करती है।'

● ●

महापुरुषों का दाम्पत्य जीवन

महापुरुषों के दो प्रकार हैं—एक वे हैं जिन्हें अपने दाम्पत्य जीवन में कोई दिलचस्पी नहीं होती। उनका क्षेत्र ही सब कुछ होता है, वे अपना समग्र जीवन उसी में लगा देते हैं। इसलिए कोई उनके दाम्पत्य जीवन को नहीं जानता। कुछ ऐसे हैं जो बाहर तथा भीतर दोनों ही क्षेत्रों में समान रुचि रखते हैं। पति-पत्नी में सुख-दुःख का पूरा पक्का साथ होता है, वे अपनी प्रेमिका या पत्नियों से प्रेरणा पाते हैं। यहाँ उनके जीवन की कुछ प्रेरणादायक एवं ज्ञानवर्धक झाँकियाँ दी जा रही हैं—

(१) **पत्नी मेरा मूल्यवान खजाना**—इटली का भाग्य-विधाता गेरीवाल्डी अपने क्रान्तिकारी साथियों के साथ साम्राज्यवादी सरकार के विरुद्ध युद्ध कर रहा था उसका जहाज ब्राजील के सागर-तट पर नष्ट हो गया, जिससे उसके साथी मर गये। इस दुर्घटना के बाद उसने सहसा विवाह कर लिया था, इसका कारण डूमास द्वारा संपादित 'गेरीबाल्डी के संस्मरण' पुस्तक में इस प्रकार लिखा है—

'स्वप्न में भी मुझे कभी विवाह का विचार नहीं आया था; परन्तु अपने दूसरे साथियों की मृत्यु के बाद मैं अपने आपको संसार में अकेला अनुभव करने लगा।'

मुझे एक ऐसी आत्मा की आवश्यकता अनुभव होने लगी जो मुझे प्रेम करती हो, मुझे किसी ऐसे व्यक्ति की जरूरत थी और बहुत ही जरूरत थी जो मुझे प्रेम करे। मित्रता तो समय का फल होता है, परन्तु इसके विपरीत प्रेम खुद एक बिजली है और कभी-कभी इसका जन्म तूफान में होता है।

मैं उन मनुष्यों में से हूँ जो जीवन के शांत कालों में भी तूफानों को अधिक पसन्द करते हैं। मेरे मन को ऐसे ही विचारों ने घेर रखा था मैंने अपनी दृष्टि दौड़ाई तो मुझे कई सुन्दर लड़कियाँ घर के काम-काज में लगी हुईं दिखाई दीं। उनमें से एक ने मेरे मन को सबसे अधिक अपनी ओर खींचा। इसके लिए किनारे पर जाने के सिवा मेरे लिए और कोई उपाय न था, मैं किनारे पर पहुँचकर फौरन उस घर की ओर चल दिया जिस पर इतनी देर से मेरी दृष्टि टिकी हुई थी। मेरा हृदय व्याकुलता से धड़क रहा था।

परन्तु सारे क्षोभ के रहते भी मुझे अपना निश्चय पक्का मालूम होता था। एक पुरुष ने मुझे भीतर निमन्त्रित किया। मेरी दशा तो ऐसी हो रही थी कि यदि वह मुझे भीतर जाने से मना भी करता तो भी मैं भीतर चला जाता।

मैंने युवती को देखा और उससे कहा—'कुमारीजी ! आपको मेरा बनना होगा।'

मैं केवल बहुत थोड़ी-सी पोर्चुगीज भाषा बोल सकता था। मैंने ये साहसपूर्ण शब्द इटालियन भाषा में कहे। इन शब्दों से मैंने एक ऐसा संबंध पैदा कर लिया जिसे केवल मृत्यु ही तोड़ सकती थी। उस स्त्री को पत्नी के रूप में पाकर मैं एक बहुत मूल्यवान खजाने पर पहुँच चुका था। वह खजाना अनिटा थी जो मेरे बच्चों की माँ थी, जिसने सुख-दुःख में मेरा साथ दिया था। अनिटा मेरी प्रिय पत्नी थी, जिससे मिलने वाला उत्साह मुझे जीवन में आगे ही बढ़ाता रहा। उसकी याद मुझे बार-बार सताया करती है।

(२) **जहाँ आप जायेंगे, वहीं मैं जाऊँगी**—सन् १९१२ की एक घटना है। एक जहाज जिसका नाम 'टाईटैनिक' है समुद्र में तेजी से डूब रहा है। बचाने की बहुत-सी कोशिशें बेकार हो चुकी हैं।

सब मुसाफिर इधर से उधर घबड़ाये हुए भाग रहे हैं। कुछ लाइफबोटों में बैठ रहे हैं, सबको अपनी जान बचाने की फिक्र है।

इन्हीं मुसाफिरों में से एक श्रीमती इसाडोर स्टास भी हैं, जबकि दूसरे मुसाफिर के चेहरे पर भय और घबराहट के चिन्ह हैं। श्रीमती इसाडोर और उनके पति बिल्कुल शांत हैं। दोनों ही भयभीत स्त्रियों तथा बच्चों को लाइफबोटों में बिठाने में सहायता कर रहे हैं। पति श्रीयुत स्टास अपनी पत्नी को किसी किश्ती से बैठकर प्राण-रक्षा करने के लिए विवश कर रहा है, क्योंकि पति-पत्नी में से केवल एक ही को लाइफबोट पर बिठाया जा सकता है। पत्नी पति को और पति पत्नी को बचाने का उदबोधन कर रहे हैं।

यह लीजिये ! पति ने बलपूर्वक श्रीमती इसाडोर को लाइफबोट पर बैठा दिया है। पर यह क्या ? अरे ! वे तो बैठते ही उछलकर वापिस जहाज में आ चढ़ी। उन्होंने बड़े स्नेह से अपने प्राण प्यारे पति का हाथ लिया है। उसके शब्द सुनिये जो वे कह रही हैं—

'प्राण-प्यारे ! हम वर्षों इकट्ठे रहे हैं, अब हम बूढ़े हो गये हैं, मृत्यु में भी साथ ही रहेंगे। आप जहाँ जायेंगे, वहीं मैं जाऊँगी।' कितना प्रगाढ़ स्नेह है।

(३) **बहुत कम स्त्रियों को ऐसा पति मिलता है**—एण्ड्रयू जेकसन ने अमेरिका के लाल इण्डियनों को छिन्न-भिन्न कर डाला था। उसने स्पेन तथा ब्रिटिश सेना को छिन्न-भिन्न किया था और 'न्यू ओर्लियंस' को बचाया था। वह समृद्ध और चटकीली नगरी उसके चरणों पर झुक पड़ती थी, बड़े-बड़े प्रसिद्ध पुरुष उसे

प्रणाम करने के लिए एकत्र होते थे, सुन्दर स्त्रियाँ उसकी सेविका होने में अपना बड़ा सौभाग्य समझती थीं।

उसकी पत्नी का नाम रेचल था, वह कभी सुन्दरी, आनन्दी और तरुणी थी। अब उम्र बढ़ जाने से वह वृद्धा फूहड़ और मोटी हो गयी थी। वह सोचती थी कि उस चटकीली-भड़कीली राजधानी में मैं ऐसे यशस्वी के साथ बैठकर उसके लिए लज्जा का कारण तो नहीं बन जाऊँगी। पति को उसने नगर की सुन्दर रूप सुन्दरियों के बीच में बैठे देखा।

अस्तु, वह आई। नगर की फैशन की तितलियाँ उसे देखकर चकित रह गयीं। उन फैशनेबल स्त्रियों में रेचल, बिल्कुल जंगली मालूम होती थीं। जब उसका पति बाहर युद्ध पर था तो वह श्रम करके अपना पेट पालती थी और रातें चिन्ता में काटती थी। वह न केवल घर का और पशुपालन का काम करती थी वरन् कपास के खेतों, अस्तबलों और चारागाहों में जाती थी। उसके हाथ कड़े हो गये थे और उत्तम रूप कुरूप हो गया था।

परन्तु उसके पति जर्नल को रेचल में कोई कुरूपता नहीं दीखती थी। न्यू ओर्लियन्स ने अपने परित्राता के सम्मानार्थ एक बड़े नृत्य की आयोजना की थी तो वह भी पति के साथ वहाँ गयी।

नाचने वाले युवक जोड़े प्रेम के नशे में मधुर-मधुर मुसकराते थे, परन्तु पति को प्रेम-बन्धन में ऐसा जकड़ा था कि कोई भी चीज उसे उस बन्धन से छुड़ा नहीं सकती थी। तब वे अपनी जन्मभूमि शतिल्ली को लौट आये और बड़े आनन्द और शान्ति से दिन बिताने लगे। उसका पति उसका पूजन करता था, दोनों अँगीठी के पास बैठकर बातें करते थे। ३५ वर्ष तक उसका पति ऐसा भक्त बना रहा कि बहुत कम स्त्रियों को ऐसा भक्त पति पाने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

(४) **प्रेम भरी उत्कृष्ट भक्ति**—डिजराइली ने ३३ वर्ष की आयु में ४० वर्ष की तुच्छ विधवा के साथ विवाह किया था। उसके लिए यह अनमेल विवाह भी पूजा के स्वर्ग और स्थाई कोमलता का आश्रय था। वह विधवा मेरी एन. निरक्षर थी, परन्तु उसमें उत्तम बुद्धि थी। वह उचित राजनीतिक परामर्श देती थी और लड़ाइयों में उपयोगी साथी थी। उसकी हल्की बातों से डिजराइली का मनोरंजन होता था और थकावट दूर होती थी।

मेरी एन. वस्तुतः अपने पति को परमात्मा समझती और उसकी पूजा करती थी। उसने पति को घर की और नौकरी की चिन्ता से बिल्कुल मुक्त कर रखा था। पार्लियामेण्ट में सबेरे के पाँच बजे तक वाद-विवाद के बाद घर आकर डिजराइली देखता था कि उसके स्वागत के लिए मेरी. एन ने बिछौने से उठकर लैम्प जला रखा है और अँगीठी में आग जल रही है। कभी-कभी वह रात को उसके लिए खाना लिये घण्टों प्रतीक्षा में रहती थी, उसने भी पत्नी की इस भक्ति का कभी निरादर नहीं किया। उसके लिए वह उस भोज में भी जाने से इनकार कर देता जो पार्लियामेण्ट में उसकी जीत पर दिया जाता था।

(५) **बापू और बा**—घटना उस समय की है जब महात्मा गाँधी ने जाति-भेद का अंत करने का निश्चय किया। उस समय वे दक्षिण अफ्रीका में रहते थे, अपने निश्चय को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से उन्होंने हर जाति के व्यक्ति को अपने यहाँ बुलाना प्रारम्भ किया। बा सबके बर्तन साफ करने को तैयार हो गयीं, पर ईसाई के बर्तन छूने से उन्होंने इनकार कर दिया—इस विषय को लेकर उन दोनों में बहस होने लगी। महात्माजी जितना बा को समझाते वे उतना ही विरोध करतीं। क्रोधावेश में गाँधीजी ने उनका हाथ पकड़कर घर से निकालते हुए कहा—"यदि तुम्हें यह काम नहीं करना है तो यहाँ से चली जाओ और वे द्वार बन्द करने लगे।" कस्तूरबा ने हाथ छुड़ाकर घर के भीतर प्रवेश करते हुए कहा—"तुम्हें शर्म नहीं आती तो मुझे तो आती है। तुम्हीं बताओ मैं अकेली कहाँ जाऊँ ?"

पति-पत्नी का संबंध अटूट और अविच्छेद है। वे दम्पत्ति धन्य हैं जो एक-दूसरे में हार्दिक अनुरक्ति रखते हुए जीवन आदर्श के निकट पहुँचते हैं। संसार के विभिन्न क्षेत्रों में धर्म समाज, राजनीति के संबंध में परोपकार कार्य करना महानता का द्योतक है, पर यदि उसी महानता का परिचय हमें अपने गृहस्थ जीवन में दे सकें तो यह निस्संदेह हमारे उस गौरव को द्विगुणित करने वाली बात होगी। प्रेम, आत्मीयता, संवेदना जिस क्षेत्र में भी प्रयुक्त होगी वहीं सुफल सामने आयेंगे, जबकि अहंकार की प्रत्येक क्षेत्र में आक्रामक प्रतिक्रिया ही होगी। अतः हमें अहंकार को नहीं प्रेम को चुनना चाहिए। प्रेम ही परमात्मा का द्वार है, प्रेम स्वयं ही परमात्मा है। प्रेम जहाँ है वहाँ सफलता, समृद्धि, सन्तोष, शान्ति, शालीनता, सौम्यता, सुख और सौभाग्य है। लेकिन प्रेम और अहंकार को साथ-साथ पालने की व्यर्थ कोशिश नहीं करनी चाहिए। दोनों एक साथ कभी भी नहीं रह सकते। यदि अहंकार बहुत प्यारा है तो प्रेम से विदा ही लेनी चाहिए, यदि प्रेम जीवन में मूल्यवान-महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है तो अहंकार को समाप्त कर देना चाहिए, दोनों में से एक को ही अपनाया जा सकता है।

● ●

मुद्रक: युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा